* ओ३म् *

पुराण-तत्व-प्रकाश

तृतीय भाग

एक मास व्यतीत होने के पश्चात् पण्डित रामप्रसाद जी बनारस से लौट कर अपने गृह पर आये और विश्राम करने के पीछे एक दिन कई एक महाशयों के साथ सेठ जी के यहां पधारे।

प्रवेश

आर्य्य सेठ—श्रीमान् पण्डित जी और अन्य भद्र पुरुषों को अपनी कोठी में आते देख प्रसन्न चित्त हो उठ कर दोनों हाथ जोड़ सब महाशयों को नमस्ते कर कहा कि आइये, पधारिये, सुशोभित हूजिये—

श्रीमान् पण्डित जी ने प्रेम पूर्वक आयुष्मान कहा और विराजमान हुए।

अन्य सब महाशय—यथा योग्य कहकर उचित स्थानों पर सुशोभित हुए। आर्य्य सेठ और सुयोग्य पण्डित जी के बीच प्रेम पूर्वक कुशल प्रश्न होने के पश्चात् श्रीमान् पण्डित जी ने कहा कि सेठ जी मेरा मन तो यह चाहता है कि मैं बहुत दिनों तक पुराणों के विषयों को सुनता रहूँ परन्तु संसारी कार्य इतने लग गये हैं कि जिस के कारण अवकाश नहीं परन्तु फिर भी सुनने की इच्छा है इस लिये आप संक्षेप के साथ कल से वेद, बुद्धि और सृष्टिक्रम के विपरीत बातें, गणेश महाराज की विचित्र २ उत्पत्ति तथा मृतक श्राद्ध सुनाकर पुराण लीला को इस समय समाप्त कर दीजिये। और फिर समय मिलने पर देखा जायगा।

आर्य सेठ—श्रीमान् की जो आज्ञा।

अन्य महाशयों ने—सेठ जी से कहा कि हमारी भी यही सम्मति है इस लिये आप अपने सेवकों द्वारा पूर्वोक्त श्रोताओं को सूचना दे दीजिये कि कल से सायंकाल के ६ बजे के पश्चात् पुराणों के विषय पर कथन होगी क्योंकि श्रीमान् पण्डित जी भी बनारस से आ गये हैं ।

आर्य सेठ—ने बहुत अच्छा कह सेवकों को बुलाकर अच्छे प्रकार समझा दिया ।

सेवकों—ने सेठ जी की आज्ञानुसार सर्व महाशयों को सूचना दी जिस के अनुकूल द्वितीय दिवस नियत समय पर महाशय गण पधारे ।

पञ्चदश परिच्छेद

आर्य सेठ—श्रीमान् पण्डित जी को आते देख उठ कर बड़े प्रेम से नमस्ते कर कहा कि श्रीमान् आइये !

पण्डित जी—आयुष्मान् कह विराजमान हुए--और अन्य श्रोतागणों में से बहुधा सज्जन आकर यथा योग्य के पश्चात् विराजते गये तब श्रीमान पण्डित जी ने कहा कि सेठ जी अब आप प्रारम्भ कीजिये ।

आर्य सेठ—ने बहुत अच्छा कह, निम्न लिखित मन्त्र से ईश्वर प्रार्थना की—

ओ३म् भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः य० २५ । २१ ॥

हे देवेश ! देव विद्वानो ! हम लोग कानों से सर्वदा 'भद्र' कल्याण को ही सुनें अकल्याण की बात हम कभी न सुनें । हे यज्ञनीयेश्वर ! हे यज्ञ कर्त्तारो

हम आंखों से कल्याण (मङ्गल सुख) को ही सदा देखें। हे जनों ! हे जगदीश्वर हमारे सब अङ्ग उपाङ्ग (श्रोत्रादि इन्द्रिय तथा सेनादि उपाङ्ग) स्थिर (दृढ़) सदा रहें जिनसे हम लोग स्थिरता से आपकी स्तुति और आपकी आज्ञा का अनुष्ठान सदा करें तथा हम लोग आत्मा, शरीर, इन्द्रिय और विद्वानों के हित-कारक आयु को विविध सुखपूर्वक प्राप्त हों अर्थात् सदा सुख में ही रहें।

श्री पंडित जी !—अब मैं वेद बुद्धि और सृष्टि क्रम के विपरीत वर्णन करता हूँ देखिये विष्णु पुराण अ० १ अ० १३ ॥

राजा वेन के मरने पर देवताओं का उनकी भुजाओं को मथ निषाद और पृथु का उत्पन्न करना ।

राजा अंग की सुनीथा नाम पत्नी से वेन नाम पुत्र हुए जो पिता के परलोकगमन होने पर गद्दी पर बैठे जिन्होंने राज्यसिंहासन को सुशोभित करते ही राज्य भर में डोंडी पिटवा दी कि हमारे राज्य में कोई मनुष्य यज्ञ, दान, होम न करे क्योंकि योग भोग का करने वाला हमारे सिवाय कोई दूसरा नहीं। हम ही यज्ञों के स्वामी हैं। इस पर ऋषियों ने राजा को बहुत समझाया परन्तु जब उन्होंने उनकी बात को न माना तब सब मुनियों ने कोप कर आपस में सम्मति कर कहा कि इस पापी राजा को मार डालना चाहिये क्योंकि यह सब के स्वामी विष्णु महाराज की निन्दा करता है यह कह कर मन्त्र पढ़ कुश को जल में डुबो उसके ऊपर जल छिड़क दिया। राजा तो भगवान की निन्दा करने से प्रथम ही मर चुका था परन्तु उस पर जल के पड़ने से अच्छी भांति मृतक हो गया।

> इत्युक्त्वा मन्त्रपूतैस्ते कुशैर्मुनिगणान्नृपम् ।
> निजघ्नुर्निहतं पूर्वं भगवन्निन्दनादिना ॥२६॥

राजा के मरने के थोड़े दिनों के पीछे—चारों तरफ से धूल उड़ती देख ऋषियों ने लोगों से पूछा कि यह धूल कहां से आती है तब सबने उत्तर

दिया कि श्री महाराज राज्य बिना राजा के हो गया है इस से चोर लोग सब का धन लूटते और धूम उड़ाते हैं तब सब मुनियों ने पुत्र होने के अर्थ मन्त्र पढ़कर राजा की जांघ मथी उसमें से एक अति कुरूप बहुत ही छोटे डील का काला मनुष्य निकला और ऋषियों से पूछा कि मैं क्या करूं तब उन्होंने उत्तर में कहा कि "बैठ" इससे उसका नाम "निषाद" हुआ और उसके वंश वाले तब ही से विन्ध्याचल पर्वत पर बसने लगे और बहुधा इन लोगों की चोरी ही जीविका थी। उस पाप रूपी निषाद के होने से राजा का शरीर निष्पाप हो गया।

तेन द्वारेण तत्पापं निष्क्रान्तं तस्य भूपतेः।
निषादास्ते तथा जाता वेनकल्मषसम्भवाः ॥३७॥

फिर मुनियों ने राजा के शरीर का दाहिना हाथ मथा उसमें महाप्रतापी शुभगुण युक्त पृथु जी उत्पन्न हुये जिनका शरीर अपने तेज से ऐसा प्रकाशित था मानों दूसरी अग्नि की मूर्ति थी।

दीप्यमानः स्ववपुषा साक्षादग्निरिवज्वलन् ॥३९॥

ऐसे राजा के होते ही आकाश से महादेव के कवचादि सब आये और सब लोग प्रसन्न हुए इनके होने से वेन जैसे पापी राजा भी स्वर्ग को चले गये क्योंकि पुं नाम नरक से जो रक्षा करे उसी का नाम पुत्र है।

तत्पुत्रेण जातेन वेनोऽपि त्रिदिवं ययौ।
पुंनाम्नो नरकात् जातः स तेन सुमहात्मना ॥४१॥

राजा पृथु ने गद्दी पर बैठ कर प्रजा को सब प्रकार से आनन्दित किया और जब कभी राजा कहीं को जाते तो नदियां थाही हो जातीं, समुद्र का जल थमि जाता पृथ्वी में अन्न विना जाते केवल चिन्तना करने से ही उत्पन्न हो जाता गायें इच्छानुसार दूध देती थीं परन्तु जिस समय कोई राजा न था उस समय अन्नादि का होना बन्द हो गया था इस से प्रजा बड़ी दुःखी थी जब यह राजा हुए तब प्रजा जो भूखों मर रही थी इनकी शरण में आई और निवेदन किया कि बिना राजा के होने से पृथ्वी ने अन्नादि चुरा लिया इस हेतु सब

प्रजा दुःखी है अब आप अन्नादि देकर रक्षा कीजिये—यह सुन राजा धनुषबाण लेकर क्रोध से धरणी के मारने के लिये दौड़े. वह गाय का वेष धर भागी ब्रह्मा आदि लोकों को गई परन्तु जब घूम कर देखा तब २ राजा को धनुषबाण लिये पीछे खड़ा पाया इससे अपना बचाव न जानकर मारे भय के कांपती हुई राजा से बोली कि हे नाथ ! क्या हमारे मारने से स्त्री हत्या का आपको कुछ दोष न होगा । हे नृप यदि आप प्रजा के उपकार के अर्थ हमको मारा चाहते हो तो मेरे न होने पर प्रजा कहां रहेगी ? यह सुन राजा ने कहा कि तुम हमारी आज्ञा के प्रतिकूल चलती हो इस लिये मैं तुमको बाणों से उड़ा दूँगा और मैं अपने योग बल से प्रजा को रक्खूंगा यह सुन धरणी फिर कांपने लगी और राजा से प्रार्थना कर कहा कि सब कार्य्य उपाय से सिद्ध होते हैं इस लिये हे नर नाथ ! जो मैं आप को उपाय बतलाती हूँ आप वही कार्य्य करें अन्नादि सब औषधियां हम में पच गई हैं सो आप दूध रूप दुह लीजिये आप बहुत प्रकार बछड़े बनाइये जिस से हम पल्हाकर सब पदार्थ चुआ देंगी परन्तु हमको बराबर भी अवश्य कर दीजिये जिससे दूध रूपी औषधियां अपने २ स्थान पर जमें यह सुनकर महाराज पृथु जी ने सर्वत्र पृथ्वी पर पहाड़ ही पहाड़ थे धनुष की नोक से तोड़ फोड़ कर दूर २ स्थापित कर दिये ।

धनुष कोट्या तदा वैन्यस्तेन शैला विवर्धिताः ॥८२॥

प्रथम की सृष्टि में ग्राम पुर नगरादि तथा खेती पाती कुछ नहीं होती थी महाराज पृथु ने पृथ्वी को बराबर कर ग्राम पुरादि बसा दिये और लोग खेती पाती भी करने लगे चूंकि राजा ने पृथ्वी के प्राण छोड़ दिये इस लिये वह उस के पिता ठहरे इसी से इस का नाम पृथ्वी हुआ । यही कथा मत्स्य पुराण अ० १० में भी है

मरीषा के जन्म की विचित्र कथा ।
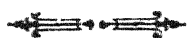
जब प्रचेतसा तपस्या कर रहे थे उस समय कोई राजा नहीं रहा था क्योंकि प्राचीन बर्हिषि को नारद जी ने ऐसा उपदेश किया था कि वह सब छोड़

वनको तप करने चले गये थे इस लिये पृथिवी पर सब वृक्ष ही वृक्ष हो गये कहीं जोतने बोने को धरती नहीं रही इस लिये बहुत सी प्रजा मर गई क्योंकि वृक्षों के कारण पवन भी नहीं चलती थी जब प्रचेतसा तपस्या करके निकले तब वृक्षों को देख बड़ा ही कोप किया और मुख से पवन व अग्नि छोड़ी सब वृक्ष जलने लगे पहिले वायु के ज़ोर से वृक्ष उखड़ पड़ते फिर अग्नि से जलते फिर पवन उड़ा ले जाती जब इस भांति बहुत वृक्ष जल गये थोड़े ही रह गये तब वृक्षों के राजा चन्द्रमा जी ने प्रचेतसों से कहा राजकुमारो ! कोप शान्त करो इन वृक्षों से भी आप लोगों का कुछ काम निकलेगा अर्थात् इनके एक कन्या है ले जाओ आधा तुम्हारी तपस्या के तेज से आधा हमारे तेज से इसमें महाप्रतापी दक्ष प्रजापति नाम पुत्र होगा उस से बड़ी सृष्टि चलेगी। यह कन्या वृक्षों को इस भांति मिली कि एक कण्डु नाम मुनि थे वे रमणीक नदी के किनारे तपस्या करते थे उनके चलायमान होने के लिये इन्द्र ने प्रम्लोचा नाम अप्सरा भेजी उसने मुनि को अपने वश में कर लिया मुनि १०१ वर्ष तक मन्दराचल पर जाय उसके संग विहार करते रहे एक दिन उसने कहा कि मैं इन्द्र लोक को जाया चाहती हूँ आज्ञा दीजिये मुनि उसमें आसक्त तो थे ही कहा कुछ दिन और रह जाओ आप के भय से वह रह गई इतने में १०७ वर्ष व्यतीत हो गये उसने मुनि से कहा फिर मुनि ने उसको विलमाया इसी भांति कई बार कहा सुनी हुई एक दिन मुनि उठे और घबराते हुए नदी की ओर चले अप्सरा ने कहा कि जाइयेगा मुनि ने कहा बोलो मत संध्या करने का समय है काल बीत जावेगा उसने हंस कर कहा सैंकड़ों वर्ष हो गये आपको संध्या करते नहीं देखा मुनि ने कहा सत्य २ कहती है या हंसी करती है। हमको तो तू प्रातः सन्ध्या के पीछे मिली थी यह सायं सन्ध्या का समय है सत्य २ बताओ कितना समय हुआ हास्य न कर। अप्सरा बोली हास्य नहीं करती आपको मेरे संग विहार करते हुए ६०७ वर्ष ६ मास ३ दिन बीते ऋषि बोले सत्य ही कहती है हम तो यही मानते हैं तुम्हारे संग विहार करते एक ही दिन बीता अप्सरा ने कहा कि आपके सामने मैं झूठ क्यों कहती फिर पूछने पर तो ऐसे महात्मा के सामने कोई भी झूठ न कहेगी यह सुन मुनि ने बड़ा पश्चात्ताप किया—हाय मैंने

अपनी सब तपस्या नष्ट करदी। नाना प्रकार से विलाप कर उस से कहा कि हे दुष्टे! तू अभी इन्द्र लोक को जा नहीं तो मैं तुझे भस्म करदूंगा, इतने में उसको भी मूर्च्छा आ गई सर्वाङ्ग से पसीना बहा, मुनि ने बड़ा कोप करके फिर कहा कि चली जा यह सुन मुनि के आश्रम से प्रम्लोचा आकाश मार्ग हो भागी और वृक्षों के पल्लवों मे अपना पसीना पोंछने लगी इस कारण जो ऋषि के वीज से उसके गर्भ था वह रोमों की राह निकल वृक्षों में हो रहा पवन ने उसको उड़ा इकट्ठा कर दिया और चन्द्रमा जी कहते हैं कि हमने अपने किरणों से पोषण कर बढ़ाया उसी से मारिषा नामक कन्या हो गई वही मारिषा नाम्नी वृक्ष कन्या आपको दी जाती है। विष्णु पुराण अंश १ अ० १५॥

नोट—पण्डित जी अब तो आप समझ गये होंगे कि जिस ऋषि ने ९०७ वर्ष इन्द्र की भेजी अप्सरा के साथ रमण किया परन्तु ऋषि को सन्ध्या ही प्रतीत हुई, ऐसी बेहोशी तो मदोन्मत्त को भी नहीं हो सकती इस पर तुर्रा यह ९०७ वर्ष रमण करने में केवल एक ही बार गर्भ रहा और वह भी पसीने के मार्ग से निकल गया—हम ने तो अभी तक वैद्यक ग्रन्थों एवं डाक्टरी मे भी यही देखा सुना है कि पसीना एक प्रकार का मानुष विष है। फिर इस पर वह गर्भ पसीना होकर निकल गया जो पेड़ की पत्तियों में लग गया जिस को वायु ने उड़ाकर इकट्ठा किया और चन्द्रमा ने किरणों से पोषण किया कहिये श्रीमान् यह किस नियम से उत्पत्ति है।

बलदेव जी का विवाह और रेवती के छोटे करने की रीति।

रैवत नाम राजा की रेवती नाम एक कन्या थी राजा उस के विवाह के विषय में सम्मति लेने के लिये ब्रह्मा जी के पास गये वहां हा हा हूं हूं नाम गन्धर्व गीत गा रहे थे जब गाना बन्द हुआ तब राजा ने अपनी कन्या के विषय में पूंछा कि किस राजा के साथ विवाह करें. तब ब्रह्मा जी ने कहा कि आप किस २ राजा के साथ विवाह करने की इच्छा रखते हैं यह सुन राजा

ने कह सुनाया जिस को ब्रह्मा जी ने कहा कि जिन २ के यहां आपको विवाह करना अभीष्ट है अब उन के पुत्र पौत्र प्रपौत्र तो क्या सन्तान में भी कोई नहीं रहा इस गाने के सुनने में बहुत सी चतुर्युगियाँ बीत गईं इस समय अट्ठाईसवीं चतुर्युगी के द्वापर का अन्त हो रहा है. इस से अन्य किसी को यह कन्या दीजिये आप के भी बन्धु वर्ग मित्रादि सब नष्ट हो गये हैं तब राजा ने फिर पूंछा कि यदि वह लोग नहीं रहे तो जो विद्यमान हैं उन में से बतलाइये किस को कन्या देवें तब ब्रह्मा जी ने अनेक प्रकार के गुण गाकर कहा कि परमात्मा परब्रह्म ने अपने अंश से आज कल पृथ्वी के द्वारिका नाम पुरी में अवतार लिया है जो बलदेव जी के नाम से प्रसिद्ध हैं वही उत्तम वर है यह सुन राजा पृथ्वी तल पर आये और देखा तो सब मनुष्य छोटे २ और बलहीन हो गये थे । राजा ने द्वारिका में जाकर ब्रह्मा जी की आज्ञानुसार बलदेव जी के साथ विवाह कर दिया—परन्तु जब बलदेव जी ने देखा कि यह स्त्री तो बहुत ही लम्बी है इस लिये अपने हल से दबा दिया जिस से उस समय की जैसी सब स्त्रियां थीं वैसी रेवती भी हो गई ।

नोट—कहिये श्रीमान् इस बात का भी कुछ ठीक है कि गान सुनते सुनते बहुत सी चतुर्युगियाँ व्यतीत हो गईं—बलदेव महाराज को पौराणिक पुरुषों ने परमेश्वर का अवतार बताया है फिर उन्होंने मदिरापान के समाचार और सूत का मारना लिखा है क्या श्रीमान अवतारियों के यही कार्य हैं अब यह भी सुन लीजिये कि स्त्रियों के छोटा करने का सहज उपाय—बलदेव जी महाराज का हल था ।

राजा निमि का मरना और देवताओं के मथने पर एक पुत्र का उत्पन्न होना ।

एक समय राजा निमि ने यज्ञ करने का विचार कर अपने पुरोहित वसिष्ठ जी से कहा कि आप हम को यज्ञ कराइये । यह सुन वसिष्ठ महाराज ने कहा कि राजन् ! आप से ५०० वर्ष आगे इन्द्र ने यज्ञ कराने का न्योता दिया है इस हेतु में प्रथम उन का यज्ञ कराकर तुम्हारा यज्ञ कराऊंगा ऐसा न हो कि तुम किसी और को बुला लो । राजा ने इस का कुछ उत्तर न दिया, वह इन्द्र

के यहां यज्ञ कराने को चले गये। इधर निमि ने गौतमादि को बुला यज्ञ कराने का आरम्भ कर दिया उधर वसिष्ठ जी यज्ञ समाप्त कराकर इधर आये देखा कि आधा यज्ञ हो गया। क्रोधित हो सोते हुए राजा को शाप दिया कि जाओ तुम्हारा यह देह न रहे राजा ने उठने पर शाप का वृत्तान्त जान यह कहा कि इस दुष्ट गुरु की भी देह न रहे, शरीर छोड़ दिया राजा के शाप से जब वसिष्ठ जी का देवलोक हुआ तो उन का तेज मित्रावरुण मुनि की देह में समा गया और उर्वशी अप्सरा को देख—च्युत हो एक कलश में गिरा जिस से वसिष्ठ अगस्त दो पुत्र उत्पन्न हुए उधर यज्ञ समाप्त होने पर जब देवता अपना २ भाग वहां लेने को आये तब गौतमादि ऋषियों ने कहा कि राजा निमि का मृतक शरीर तैल में यथावत् रक्खा हुआ है आप सब आशीर्वाद देकर जिलाइये। देवों ने निमि को बुलाया तब उन्होंने कहा कि देवगण आप सब लोग संसार के ऊपर कृपा करते हैं पर यह नहीं जानते कि उत्पन्न होने से मरने में कितने २ कष्ट होते हैं। इस लिये अब हम जीना नहीं चाहते वरन् प्रत्येक प्राणी की पलक पर बैठना चाहते हैं जिससे सब को स्मरण रहे। यह सुन देवों ने कहा कि अच्छा। उसी समयसे प्राणी पलक मारने लगे और राजा के पुत्र न होने के कारण राजाहीन राज्य रहने से चोरों ने बड़ा उपद्रव मचाया। तब ऋषियों ने आकर राजा के शरीर को मथा जिससे एक पुत्र हुआ उसका नाम जनक विदेह होने से विदेह मथे जाने से मिथिये नाम उस बालक के हुए।

नोट—क्या वसिष्ठ जैसे विद्वान ऋषि को इतना भी ज्ञान न था कि यह शरीर तो वैसे ही अनित्य है फिर इस प्रकार का शाप देना कि तेरी यह देह न रहे उनकी विद्वत्ता का परिचय करा रहा है। अब लीजिये विष्णुपुराण के निर्माता की बुद्धि से भी परिचय प्राप्त कीजिये। जब वसिष्ठ मरने लगे तो उनका तेज तो मित्रावरुण की देह में समा गया और उर्वशी अप्सरा को देख............जो कलश में गिरा उस से दो पुत्र हो गये एक वसिष्ठ दूसरे अगस्त। कहिये श्रीमान्! यह कहां तक विद्या और बुद्धि के अनुकूल है। राजा के मरने पर भी यज्ञ होता रहा परन्तु अब तो मृतक को स्नान सन्ध्यादि कर्मों को छोड़ देते हैं पूर्णाहुती के समय देवता आये तो उन्होंने उसे जिवित करदिया

परन्तु वसिष्ठ ऋषि की किसी ने कुछ भी सुध नहीं ली। क्या यहां भी धन ही के गीत गाए गये फिर भी जब ब्राह्मणों ने निमि को पुनर्जीवित कर दिया तो राजा ने कहा कि मैं अब जीना नहीं चाहता क्योंकि इसमें बड़े क्लेश हैं। प्रत्येक प्राणी के ऊपर उठना, नीचे गिरना, सकोड़ना, फैलाना और चलना, यह पाँच कर्म हैं। एवं पञ्च प्राण, पञ्च उप प्राण और ग्यारहवां जीवात्मा जिनकी रुद्र संज्ञा है उनमें उपप्राणों में जो कूर्म है उसका कार्य्य पलक खोलना मूंदना है फिर भला यह कैसे माना जाय कि निमि जब से पलकों पर आये तब से यह क्रिया हुई अब राजा के मृतक शरीर के मथने से पुत्र का उत्पत्ति होना भी बाज़ीगरी का खेल है यदि यह सत्य है तो पुत्र हीन पुरुषों को इस औषधि से अपना कार्य्य सिद्ध कर सुख प्राप्त करना चाहिये।

बलदेव जी का मदिरा पान कर यमुना को खेंचना।

मानुषरूप धारी धरणीधर [illegible] बलदेवजी गौओं के साथ वृन्दावन में विहार करते थे जिन्होंने पृथ्वी का बहुत सा भार उतार डाला था कारण पाय पृथ्वी में विचरते थे उनके भोग के लिये वरुण जी वारुणी से बोले कि हे मदिरे! जिससे तू बलदेव जी को सदा प्यारी है। तेरे पान की उनको इच्छा बनी रहती है इस लिये अब तू उन्हीं के भोग के लिये उनके निकट जा यह सुन वह वृन्दावन में कदम्ब के खोंडले में आय बसी। श्रीमान् बलदेव जी महाराज भी विचरते २ वहीं आन पहुंचे क्योंकि उसकी महक उनको दूर से ही आ रही थी। निकट पहुंच मदिरा की धारा देख बलदेव जी परम आनन्दित हुए और गोप गोपियों के साथ यथेष्ट पान किया। जब अच्छे प्रकार मतवाले हो गये तब यमुना से कहा कि हे यमुने! हमको गर्मी अधिक जान पड़ती है। तुम यहां चली आओ हम स्नान करेंगे। यमुना ने मतवाले समझ उनकी बात पर कुछ ध्यान नहीं दिया तब क्रोधित हो हल को किनारे लगाय खींचा और कहा कि हे पापे! न आई न आई अब जहां चाहे चली तो जा जब ऐसा हुआ तब यमुना उस स्थान को छोड़ जहां बलदेव जी महाराज थे वहाँ जाकर बहने लगी। फिर शरीर धारण कर प्रणाम और बोली कि हे राम! हम पर कृपा कीजिये हमको छोड़ दीजिये। तब बलदेवजी ने कहा कि तू हमको और हमारे

बल को नहीं जानती। हम खींच कर तेरे सहस्र-धारा कर देंगे जिस से जहाँ चाहे वहां लाँग कर चले जांय यह सुन यमुना ने बड़ी स्तुति की तो अपना हल (दुबका) छिपा दिया।

नोट—श्री पण्डित जी! इस कथा से बलदेव जी महाराज का मदिरापान करना प्रकट होता है परन्तु यह बात देवताओं के विपरीत है तिस पर बलदेव जी महाराज विष्णु महाराज के भाई एव अवतारी में थे। फिर न मालूम व्यास जी ने इस कथा को क्यों लिखा फिर अन्य बातों का क्या कहना?

श्री पंडित जी ने कहा कि आज यहां ही विश्राम दीजिये।

आर्य्य सेठ—बहुत अच्छा।

इतने में सब चल दिये सेठ जी ने हाथ जोड़ नमस्ते की पं० जी ने यथा योग्य कहा।

॥ इति पञ्चदश परिच्छेद ॥

अथ षोडश परिच्छेद।

आर्य्य सेठ—पंडित जी को देख प्रेम से नमस्ते कह कर कहा कि आइये। पंडित जी [illegible] कह कर बैठ गये इतने अन्य महाशय भी आये और यथायोग्य के पश्चात् [illegible] हुये। तदनन्तर—

श्री पं० जी ने कहा कि सेठ जी हम विष्णुपुराण से तो वेद और बुद्धि तथा सृष्टिक्रम के विपरीत बातों को सुन तृप्त हो गये। अब आप पद्म, ब्रह्माण्ड वामन पुराण से सुनाइये।

सेठ जी ने—बहुत अच्छा कह यथाक्रम कहना आरम्भ किया।

बल के शरीर से धातुओं की उत्पत्ति।

जब विष्णु और जालन्धर का घोर युद्ध हो रहा था उस समय बल से इन्द्र लड़ने के लिये सम्मुख आये तब उन्होंने भयङ्कर शब्द किया तब जिस० को

सुन बल हंसे तो उन के मुख से मोती निकलने लगे ॥ १६ ॥

पद्म पुराण षष्ठ उत्तर खंड अ० ६

ननादेन्द्रस्तदा भीमं तच्छ्रुत्वा स बलोऽहसत् ।
हसतस्तस्य निश्चेरुर्मुखतो मौक्तिकानि च ॥

तब इन्द्र ने अंग की अभिलाषा के कारण उस से संग्राम न कर उस के अत्यन्त बल की प्रशंसा करी तब बल ने कहा बरदान मांगा । इस को सुन इन्द्र ने कहा कि यदि आप मुझ से प्रसन्न हैं तो आप अपना शरीर दीजिये । बल ने कहा कि शस्त्रों से काट कर हमारा शरीर लीजिये, क्योंकि सज्जनों का परम कार्य यही है कि परोपकार करें, तब इन्द्र ने मुद्गर से शरीर काटने का आरम्भ किया परन्तु जब उस का शरीर मुद्गर से न कटा तब सारथी के कहने से वज्र से काटना आरम्भ किया तो अङ्ग का एक भाग तो कनकाचल में, दूसरा हिमाचल में, तीसरा गोनग में, चौथा गंगा जी में, पांचवां मन्दराचल में, और विजय के अङ्ग मे उत्पन्न छठा भाग वज्राकार में गिरा ॥ २३ ॥ कर्म और जाति में शुद्ध होने के कारण से उस की देह के अंग रत्न बीज से परिपूर्ण थे । वज्र से हाड़ों के जो कण गिरे वह छः कोण की मणि हो गये, तथा नेत्रों से इन्द्रनीलमणि, कानों से मणिका मेद से मरकत, जीभ से मूंगे दाँतों से मोती, मज्जा से मरकतमणि, नस से गारुत्मतमणि, विष्ठा से काँसा, वीर्य से चांदी, मूत्र से तांबा, अङ्ग के उबटन से पीतल, शब्द से वैडूर्यमणि तथा श्रेष्ठ रत्न, नखों से सोना, रक्त से रस, मेद से स्फटिकमणि और मांस से मूंगा इत्यादि सब रत्न बल के शरीर से उत्पन्न हुए ।

वज्राकरे पपातांशः षष्ठश्च विजयाङ्गजः ॥२३॥
तस्य जातिविशुद्धस्य परिशुद्धेन कर्मणा ।
कायस्य ख्वयवाः सर्वे रत्नबीजत्वमागताः ॥२४॥
वज्रादस्थिकणाः कीर्णाः षट्कोणमणयोऽभवत् ॥२५॥
मज्जोद्भवं मरकतं गारुत्मतमभून्नसा ।
कांस्यं पुरीषं रजतं वीर्यं ताम्रश्च मूत्रजम् ॥२७॥

अंगस्यो द्वर्तनाज्जातं पित्तलं ब्रह्मवर्तिका ।
नदाद्वैदूर्यमुत्पन्नं रत्नन्चारुतरं तथा ॥२८॥

नोट—पदार्थ एवं भूगर्भविद्या के ज्ञाता विचार पूर्वक देखें तो सही कि वत्त के शरीर एवं मलमूत्र से चांदी, कांसा, तांबा, इत्यादि क्या २ उत्पन्न होगया प्यारे सनातनियो ! यदि वत्त की देह से रत्नादि उत्पन्न हुए तो क्या पहिले पृथ्वी पर रत्नादि न थे ? शास्त्रों में पृथ्वी को रत्नगर्भा कहते हैं क्या यह मिथ्या ही है ?

ज्वरं की अद्भुत उत्पत्ति और उसकी अपूर्व औषधि ।
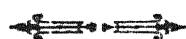
अध्याय २५० में लिखा है कि श्री कृष्ण महाराज बाणासुर के संग्राम को गये और वहाँ उसकी सहायता के लिये महादेव जी उपस्थित थे जब दोनों में संग्राम हुआ तब महादेव ने कृष्ण पर तापज्वर को छोड़ा तो कृष्ण ने शीतज्वर से उसका निवारण किया । कृष्ण और महादेव जी से छोड़े हुए यह दोनों ज्वर उन्हीं की आज्ञा से मनुष्य लोक में प्रवेश करते हुए जो मनुष्य कृष्ण जी और महादेव जी का युद्ध सुनते हैं वे सब ज्वर से छूट कर रोग रहित हो जाते हैं । ३२ । ३४ ॥

नोट—ज्वर की उत्पत्ति और इलाज को जानकर हम नहीं जानते कि वर्तमान समय में जब कि ज्वर से सम्पूर्ण प्रजा दुखी हो रही है क्यों नहीं धर्म-सभा इस संग्राम की कथा सुना कर आरोग्यता प्रदान कराती ।

राजा सगर की रानी के साठ हज़ार पुत्रों का उत्पन्न होना।

इक्ष्वाकुवंश में सगर नाम एक प्रसिद्ध राजा थे उन के केशनी और सुमति यह दो स्त्रियाँ थीं परन्तु सन्तान किसी के न थी इस लिये पुत्र की इच्छा से कैलास पर्वत पर जाकर तपस्या करने लगे कालांतर में पार्वतीनाथ उनके पास आये जिसको देख राजा ने रानी सहित प्रणाम कर दो पुत्र होने का बरदान मांगा तब शिवजी ने कहा कि हम प्रसन्न होकर यह बरदान देते हैं कि तुम्हारी

एक स्त्री के अभिमान से भरे हुए महाशूरवीर साठ हज़ार पुत्र होंगे और वे सर्व एक ही स्थान पर एक दिन में ही नष्ट हो जायेंगे और एक स्त्री से वंश की रक्षा करने वाला महाशूरवीर एक पुत्र होगा ऐसा कह अंतरध्यान होगये राजा भी अपने नगर को चले गये फिर दोनों के गर्भ रहा और समय पूरा होने पर सुमति स्त्री के एक तूम्बी उत्पन्न हुई और केशिनी स्त्री के देवताओं के समान रूप वाला एक पुत्र उत्पन्न हुआ तब राजा सगर ने उस तूम्बी के फेंक देने का विचार किया उसी समय भगवान् और्व ऋषि वहाँ आये और कहा कि राजन्! आप ऐसा साहस मत कीजिये इस तूम्बी के भीतर पुत्र हैं और तूम्बी के भीतर से जो बीज निकलें उनकी यत्न से रक्षा कीजिये आप इस तूम्बी के बीजों को घी से भरे हुए किसी पात्र में रखिये तब आपको साठ हज़ार पुत्र मिलेंगे।

ब्रह्माण्ड उपो० पा० अ० ५१ ॥

अप्येवं कृते राजन् भवतोमरतसादृतः ।
यथोक्त संख्या पुत्राणां भविष्यन्ति न संशयः ॥४३॥

राजा ने ऋषि के वचनानुसार कार्य्य किया अर्थात् राजा ने एक २ बीज को पृथक् २ कर घी के बरतनों में रख दिया और पुत्रों की रक्षा के निमित्त एक २ धाय सब बरतनों के समीप नियत करदी फिर बहुत काल बीतने पर महातेजस्वी महाबली साठ हजार पुत्र हो गये।

एवं क्रमेण संजातास्तेनाम्ने महीपते ।
ववृधुः संघशो राजन्षष्टिसाहस्र संख्ययाः ॥४७॥

यह राजपुत्र बड़े होने पर बड़े २ कुकर्म कर के देवताओं को क्लेशित करने लगे तब वह ब्रह्मा की शरण में गये, उन्होंने कहा कि तुम सब अपने २ घर जाओ इन सब का थोड़े दिनों में नाश हो जावेगा।

फिर कुछ दिनों के बाद राजा ने यज्ञ करने का आरम्भ किया और घोड़ा छोड़ा। सब पुत्र उसकी रक्षा में लग गये घोड़ा पृथ्वी पर घूमता हुआ समुद्र के तट पर आया तो अत्यन्त यत्न से रक्षा करने पर भी कहीं अन्तर्ध्यान हो गया सब पुत्रों ने आकर राजा से कहा राजा ने फिर सब को उसके खोजने के लिये भेजा परन्तु जब ढूंढने पर घोड़ा और चुराने वाला न मिला तब लौटकर

पिता से कहा, उस समय राजा को क्रोध आया और कहा तुम अगम्य देशों में ढूंढने को जाओ, वह चल दिये। अनन्तर सगर के पुत्रों ने पृथ्वी को कुदार और फावड़ों से यत्न पूर्वक खोदना आरम्भ किया उस समय खोदने से वरुण के स्थान समुद्र को बड़ा दुःख हुआ और चारों ओर से समुद्र खोदने से उसके रहने वाले असुर, सर्प, राक्षस और अनेक प्रकार के जन्तु सगर पुत्रों से पीड़ा पाकर घोर शब्द करने लगे परन्तु बहुत काल खोदने पर भी कहीं घोड़ा नहीं मिला अन्त को सगर के पुत्रों ने बड़ा क्रोध किया तब उत्तर पाताल के कोने में खोदना आरम्भ किया और पाताल तक खोदते चले गये वहां देखा कि पृथिवी में घोड़ा घूम रहा है उसके निकट कपिल महात्मा जी भी विराजमान हैं।

चरन्तमश्वं पाताले ददृशुर्नृपनन्दनाः ॥१५॥

ददृशुश्चमहात्मानं कपिलं दीप्त तेजसम् ॥१७॥

संप्रहृष्टास्ततः सर्वे समेत्य च समंततः ॥१८॥

घोड़े को देख सब प्रसन्न हुए और महात्मा का निरादर करने के लिये काल के वशीभूत हो क्रोध सहित घोड़ा पकड़ने को दौड़े राजपुत्रों का यह व्यवहार देख महात्मा को बड़ा क्रोध आया फिर नेत्र खोल कर सगर के पुत्रों पर अपना तेज डाला जिसके लगते ही सगर के पुत्र भस्म हो गये। नारद मुनि ने पुत्रों के नष्ट हो जाने का सब वृत्तान्त राजा से कहा जिसको सुन राजा को बड़ा शोक हुआ।

पण्डित जी—राजा सगर के साठ हज़ार पुत्रों की उत्पत्ति को सुन कर भी आपके चित्त में क्या यह भ्रम नहीं हुआ कि यह पुराण व्यास महाराज के कहे हुये नहीं हैं। देखिये स्त्री के तुम्बी और उसके बीजों को घी के मटकों में रखने से पुत्र उत्पन्न हो गये परन्तु तुम्बी की लम्बाई भी नहीं लिखी न जाने कितनी बड़ी होगी जिसमें ६० हज़ार बीज थे।

देवताओं से वृक्षों की उत्पत्ति

वामनपुराण—अध्याय १७ में लिखा है कि आश्विन मास में जब ईश्वर की नाभि से कमल उत्पन्न हुआ तब देवताओं में से कामदेव के कदम्ब,

कुबेर के वट, महादेव के हृदय में धतूरा, ब्रह्मा की देह के मध्यभाग से खैर, विश्वकर्मा के शरीर से कण्टकि, पार्वती के हाथ के तलवे में कुन्द, गणेशजी के मस्तक में संभालू, धर्मराज के दहिने पाँसु में पलाश. बायें में काला गूलर स्वामिकार्तिक के शरीर से जीया पोता, सूर्य्य के शरीर से पीपल, कात्यायनी के शरीर से जाँटी, लक्ष्मी के हाथ में बेल, सर्पों से शरस्तंब और वासुकी सर्प की फैली हुई पंछ के पृष्ठभाग में सफेद और काली दूब, साध्य देवताओं के हृदय में हरिचन्दन वृक्ष उपजा ऐसे जो २ जिसके शरीर से उत्पन्न हुए तिस २ में उनकी प्रीति हुई।

कन्दर्पस्यकराग्रे तु कदम्बश्चारुदर्शनः।
तेन तस्य पराप्रीतिः कदम्बेन विवर्द्धते ॥२॥
यक्षाणामधिपस्यापि मणि भद्रस्य नारद।
वटवृक्षः समभवत्तस्मिंस्तस्यरति सदा ॥३॥
महेश्वरस्य हृदये धत्तूर विटपः शुभः।
संजातः स च सर्वस्य रति कृत्त य निरदशः ॥४॥
ब्रह्मणो मध्यतो देहाज्जातो मरकतप्रभः।
खदिरः कंटकी श्रेयान भवद्विश्वकर्मणः ॥५॥
गिरिजायाः करतले कुन्द गुल्मस्त्वजायत।
गणाधिपस्य कुम्भस्थो राजते सिंधुवारकः ॥६॥
यमस्य दक्षिणे पार्श्वे पालाशो दक्षिणोत्तरे।
कृष्णोदुम्बर कोरौद्रो जातः क्षोभकरोऽव्ययः।
स्कन्दस्य बन्धुजीवश्चरवेरश्वत्थ एव च ॥
कात्यायन्याः शमीजाता बिल्वोलक्ष्म्याः करेऽभवत्।
नागानां सुमनो ब्रह्मञ्छरस्तंबो व्यजायत।
वासुकेर्विस्तृते पुच्छे पृष्ठे दूर्वासितासिता ॥६॥

साध्यानां हृदये जातो वृन्तोहरित चन्दनः ।
एवं जातेषु सर्वेषु तेन तत्र रतिर्भवेत् ॥१०॥

नोट—इस उत्पत्ति को पढ़कर आप ही विचार करें कि यह ही व्यास जी महाराज लिखित पुराण हैं।

श्री पंडित जी—सेठ जी समय हो गया।

सेठ जी—ने कहा बहुत अच्छा। पुनः सेठ जी ने श्री पण्डित जी को नमस्ते की पंडित जी ने आशीर्वाद कहा और सब यथायोग्य कहकर चल दिये।

इति षोडश परिच्छेद।

अथ सप्तदश परिच्छेद
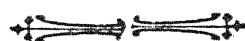
सेठ जी—ने श्रीमान् पण्डित जी आदि को देखकर नमस्ते कर कहा कि आइये।

पंडित जी—ने आशीर्वाद कहा और और अन्य सब यथा योग्य कह बैठ गये।

सेठ जी—ने पण्डित जी की तबियत का हाल पूछा, कहा, कि श्री महाराज आज मैं और शेष पुराणों से वेद, बुद्धि तथा सृष्टिक्रम के विपरीत कथाएं सुनाता हूं। देखिये:—

विश्वामित्र के शाप से सरस्वती में रक्त की धारा का होना फिर अन्य ऋषियों के वरदान से शुद्ध होना।

वामन पुराण—अध्याय ४० में लिखा है कि विश्वामित्र और वसिष्ठ मुनि के बीच तपरूपी ईर्षा के कारण बड़ा वैर होगया था एक समय विश्वामित्र ने सरस्वती नदी को बुलाकर कहा कि वसिष्ठ मुनि को अपने वेग से यहाँ

बहा ला तब मैं उनको मारूंगा उसने दुःखित हो वसिष्ठ जी के समीप जा सब वृत्तान्त कहा और उनको बहाकर ले चली तब वसिष्ठ महाराज ने सरस्वती की स्तुति की। इधर सरस्वती ने वसिष्ठ को विश्वामित्र के समर्पण किया त्योंही उन्होंने उनके मारने के लिये प्रहार किया। तब सरस्वती ब्रह्म हत्या के भय से वसिष्ठ को उलटा बहाने लगी उस समय विश्वामित्र जी ने क्रोधित हो कहा कि लोहूयुक्त राक्षसों से सेवित रहेगी। वह उसी प्रकार बहने लगी जिस को देख देवता दुःखित हुए बहुत काल पीछे बहुधा मुनि तीर्थयात्रा के अर्थ सरस्वती पर गये फिर उसको बुला कारण को जान प्रसन्न हो अरुणा नदी को उसमें मिलाकर राक्षसों की मुक्ति के अर्थ यहां पर संगम तीर्थ की मुनियों ने कल्पना की जो कोई इस संगम पर तीन दिन वासकर स्नान करता है वह पापों से छूट जाता है घोर कलियुग में भी स्नान करने से मुक्ति होती है इसके पीछे सब राक्षस संगम में स्नान कर स्वर्ग को चले गये।

नोट—क्या सरस्वती भी कोई शरीर धारी स्त्री थी और जब सरस्वती संगम में स्नान करने से पापों की निवृत्ति होकर मुक्ति हो जाती है तो फिर सत्यादि यमनियम के पालन करने की क्या आवश्यकता ? तथा इस संगम का जब ऐसा प्रताप है तो फिर अपने पतित भाइयों को स्नान कराकर शुद्ध कर लेने में क्या हानि ?

ब्रह्मा के कानों से दिशाओं की उत्पत्ति

वाराहपुराण—अध्याय २९ में लिखा है कि जब ब्रह्मा को चिन्ता हुई तब ब्रह्मा के कानों से दश दिशा उत्पन्न हुईं।

प्रादुर्बभूवुः श्रोत्रेभ्यो दशकन्या महाप्रभाः।
पूर्वा च दक्षिणा चैव प्रतीची चोत्तरा तथा ॥३॥

राजा विपश्चित से नरकियों को अनोखा लाभ।

जब राजा विपश्चित मरकर नरक को गया तब उसने यमदूत से कहा कि मैं नाना प्रकार के धर्म कार्य करता रहा फिर मैं क्यों नरक को आया तब

यमदूत ने कहा कि तुम ने थोड़ा सा पाप पिछले जन्म में किया है उसको मैं तुम्हें बताता हूँ देखो विदर्भ देश की राजकन्या पीवरी नाम स्त्री ऋतु से शुद्ध हुई तब तुमने उसके साथ गमन नहीं किया इस हेतु जो ऐसा करते हैं वह पितृ के ऋण से पापदोषी होकर नरक में गिराये जाते हैं यही तुम्हारा पाप है। इसी से नरक भोग कराया गया अब तुम स्वर्ग को चलो तब राजा ने कहा जहां तुम ले चलोगे मैं वहां ही चलूंगा परन्तु यह बतलाओ कि यह लोग जो अति दुखी हैं कोई कुछ कोई कुछ दुःख उठा रहा है यह क्यों उठा रहा है ? अनेक जन्म में जो पाप या पुण्य जान या अनजान से उत्पन्न होते हैं वह सब कर्मों का फल है, आत्मा के साथ रहता है देह से या मन से या वचन से जिस प्रकार जो मनुष्य करता है उसी भाँति उसके फल को पाता है दूसरी नहीं अर्थात् बिना पाप या पुण्य के लिये कोई भी सुख अथवा दुःख नहीं भोगता। जिस प्रकार ये पापी पुरुष इस घोर नरक में रह कर दुःख भोग रहे हैं इसी प्रकार हे राजन् पुण्यवान मनुष्य स्वर्ग में देवता, गन्धर्व, सिद्ध और अप्सराओं के साथ गीत तथा नृत्यादि द्वारा अपने पुण्य का फल भोग कर फिर देवता मनुष्य या तिर्यक् योनि को प्राप्त होते हैं। मारकण्डेय पुराण अ० १४ ॥

अकुर्वन् पापकंकर्म पुण्यमवाप्यतिष्ठते ।
यद्यत्प्राप्नोति पुरुषो दुःखंसुखमथापिवा ॥३३॥
प्रभूतमथवा स्वल्पं विक्रियाकारि चेतसः ।
तावत्तावत्स्य पुण्यंवा पापंवाप्यथचेतनन् ॥३४॥
भुनक्ति नरा घोरं नरकान्निर्विनिलिः ।
तथैव राजन्! पुण्यानि स्वर्गलोकेऽमरैः सह ॥३६॥
गन्धर्व सिद्धाप्सरसां गीताद्यै रुपभुज्यते ।
देवत्वं मानुषत्वेच्च तिर्यक्त्वेच शुभाशुभम् ॥३७॥

सविस्तार वर्णन करने के पीछे यमदूत ने कहा कि अब मैं सब आप को सुना चुका और सब नरक दिखा चुका अब आप दूसरे स्थान को चलिये जब राजा यमदूत को आगे कर चलने को उपस्थित हुए तब नारकी लोग जो

कष्ट में पड़े थे बोले कि हे राजन ! आप हम सबों पर कृपा करके एक घड़ी और यहां ठहर जाइये क्योंकि जो हवा आपके शरीर से ठोकर खाकर आती है उससे हम लोगों को बड़ा आराम मिलता है । अध्याय १५ श्लोक ४८ ॥

प्रसादंकुरु भूपेति तिष्ठतावन्मुहूर्त्तकम् ॥४८॥

जितने परिताप या दुःख जो हम लोगों के शरीर में हैं वह सब इस हवा के लगने से छूट जाते हैं, इस लिये ऐ नर व्याघ्र ! हम सबों पर दया कीजिये ।

अपहन्ति नरव्याघ्र दयांकुरु महीस्ते ! ॥४९॥

राजा नारकियों के इस वचन को सुन यमदूत से पूछने लगे यह लोग मेरे रहने से क्यों प्रसन्न होते हैं ? । मैंने मृत्युलोक में कौन सा पुण्य किया जो इन लोगों के लिये आनन्ददायक हो रहा है सो तुम मुझे बतलाओ । यमदूत ने कहा कि ऐ राजन् ! जो आपने देवता, पितर और अभ्यागत इत्यादि को पहिले समर्पण करके शेष अन्न खाकर अपना शरीर पाला था और जो कि आप का मन हर घड़ी इन्हीं बातों में रहता था इस कारण तुम्हारे अंग की स्पर्श हुई वायु आनन्द को देने वाली है जिसके स्पर्श से इन सब पापकर्मी लोगों को दंड का कष्ट नहीं जान पड़ता ।

पितृदेवातिथिप्रेष्यशिष्टेनान्नेन ते तनुः ।

पुष्टिमभ्यागतायस्मात्तद्गतञ्च मनोयतः ॥५२॥

तब राजा ने कहा हे यमदूत ! मेरी समझ में ब्रह्मलोक आदि स्वर्ग में वह सुख नहीं है जो सुख दुःखी लोगों की रक्षा करने से मनुष्यों को प्राप्त होता है यदि मेरे रहने से इन नरकियों को दण्ड का कष्ट नहीं जान पड़ता तो मैं इन दुःखी लोगों के लिये यहां ही रहूँगा तब यमदूत ने कहा कि यह धर्म और इन्द्र आपके लेने के लिये आये हैं जहां आपका जाना आवश्यक है सो चलिये । धर्म ने कहा कि ऐ राजन् ! तुमने मेरी सब प्रकार से उपासना की है इस लिये मैं तुमको स्वर्ग को ले चलूंगा इस पर इन्द्र ने कहा कि यह पापी लोग अपने पाप कर्म्मों की सज़ा भोग रहे हैं और आपने पुण्य कर्म किया है इसी लिये आपको स्वर्ग जाना होगा फिर राजा ने कहा आप दोनों यह बतावें कि मेरे पुण्य का

प्रमाण कितना है तब धर्म ने कहा जिस प्रकार आकाश में तारे, समुद्र के जल में कण और गङ्गा के किनारे की बालू और महावृष्टि के बिन्दु अगणित हैं उसी प्रकार हे राजन ! तुम्हारे पुण्य की भी गिनती नहीं। जब से तुम इन नरकियों पर कृपा कर रहे हो तब से अब तक तुम्हारा समय सौ हज़ार वर्ष का व्यतीत होगया। इस लिये अब आप स्वर्ग को चल वहां का सुख भोगें। यह पापी लोग अपने कर्म्मों का फल इस नरक में भोगेंगे। तब राजा ने कहा कि यदि हम लोगों से इन लोगों की ही भलाई नहीं हुई तो अन्य कोई हम से भलाई की आशा कैसे करेगा। अतः हे देवराज ! जो कुछ हमारा सुकृत पुण्य है उस से यह नरकी जन अपने कष्ट से छूट जावें। ७१ से ७२ तक॥

कथं स्पृहां करिष्यन्तिमत्सम्पर्केषु मानवाः।
यदि मत्सन्निधावेषामुत्कर्षोनोपजायते ॥७५॥
तस्मात् यत्सुकृतं किञ्चिन्ममास्तित्रिदशाधिप ! ।
तेन मुच्यन्तु नरकात् पापिनोयातनांगताः ॥७६॥

तब इन्द्र ने राजा से कहा कि आपको बैकुण्ठ हुआ और देखो यह नरकी लोग भी नरक के कष्ट से छूट गये। राजा के ऊपर फूल बरसने लगे और विष्णु भगवान् राजा का हाथ पकड़ कर विमान में बिठा कर बैकुण्ठ ले गये।

नोट--इस कथा में पूर्वापर विरोध है कारण कि पूर्व तो यह कहा कि अपने कर्म अपने ही लिये सुख या दुःख दायक होते हैं और बिना कर्म का फल भोगे कोई सुख वा दुःख नहीं पाता और अन्त में यह उक्ति कि राजा ने अपने पुण्य का फल नरकियों को देदिया जिससे नारकी नरक से छूट गये।
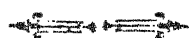
एक राजा के साथ हरिणी का वार्तालाप

मारकण्डेयपुराण—जि० २ अध्याय ६६ में लिखा है कि स्वरोचि अपने तीनों पुत्रों को पृथक् २ राज्य देकर आप अपनी स्त्रियों से विहार करने लगे, एक समय शिकार को गये और सुअर के पीछे दौड़े तब एक हरिणी ने

आकर कहा कि आप इस बाण से मुझको मारिये सुअर मारने से क्या लाभ। यदि मुझको मारोगे तो मैं अपने दुःख से छूट जाऊंगी तब राजा ने कहा तुझ को क्लेश क्या है ? हरिणी ने कहा कि मैं जिस पुरुष को चाहती हूँ वह अन्य स्त्री पर आसक्त है तब राजा ने कहा कौनसा तेरा पति है जो तुझको नहीं चाहता, वह कौन पुरुष है जिसको तू चाहती है तब हरिणी ने कहा कि मैं तुम्हीं को चाहती हूँ, तुम्हीं ने मेरा मन हर लिया है, तुम को औरों से प्रीति है इस लिये मैं अपने जीवन को वृथा समझती हूँ तब राजा ने कहा कि तू हरिणी है मैं मनुष्य हूँ मेरा तेरा संयोग किस प्रकार से हो सकता है, हरिणी ने कहा जो आप प्रसन्न हो मुझसे भोग करेंगे तो फिर जो कुछ आप चाहेंगे वह सब आप को प्राप्त होगा तब राजा ने उसके साथ भोग किया तो उसी समय वह सुन्दर स्त्री हो गई ॥२१॥

आलिङ्ग ततस्तांसु स्वरोचिर्हरिणाङ्गनाम्।
तेन चालिङ्गितामद्यः साभूद्दिव्यवपुर्धरा ॥२१॥

तब स्वरोचि ने पूछा तू कौन है तब उसने कहा कि मैं वन की देवता हूँ देवता लोगों ने मुझ से विनय कर कहा कि तुम मनु को पैदा करो इस कारण मैंने आप से कहा, यह सुन स्वरोचि ने हरिणी से भोग कर एक अपने समान तेजवान पुत्र उत्पन्न किया तब देवताओं ने फूलों की वर्षा की और द्युतिमान उसका नाम रक्खा गया।

तस्यतेजः समालोक्यनामचक्रे पिता स्वयम्।
द्युतिमानिति येनास्य तेजसा भासितादिशः ॥२८॥

नोट—राजा का हरिणी से भोग करना और उस का स्त्री होना आप के विचारने योग्य है ?

श्रीमद्भागवत् पञ्चमस्कन्ध के प्रथम अध्याय में लिखा है कि राजा प्रियव्रत ने यह विचार कर कि सूर्य्य सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करता है इस कारण आधे जगत् में रात्रि रहती है उसको मैं दिन करूंगा ऐसा विचार कर अपने प्रकाशमय रथ पर बैठ के सूर्य्य के समान घूमने लगा।

येषां उहरद्रथ चरणनेमिकृतपरिखातास्ते सप्तसिन्धव आसन्यत एवकृताः सप्तभुवो द्वीपाः ॥३१॥

महाराज प्रियव्रत के रथ के पहिये से जो खाई बनी वही सात समुद्र हो गये और जो भूमि उनके बीच में रह गई वह जम्बू प्लक्ष और शाल्मली आदि सात द्वीप के नाम से प्रसिद्ध हो गई।

नोट—कहिये श्रीमान् क्या पहिले समुद्र न थे?

मनु की पुत्री इला का पुत्र हो जाना।

श्रीमद्भागवत के नवम स्कन्ध अध्याय १ में लिखा है कि सूर्य्य वंश के आदि पुरुष महात्मा मनु के दश पुत्र थे उनकी उत्पत्ति से प्रथम मनु ने महर्षि वसिष्ठ से पुत्रेष्टि यज्ञ कराया जिसके प्रताप से मनु की स्त्री के गर्भ से इला नाम की कन्या उत्पन्न हुई जिसको देख मनु को बड़ा असन्तोष उत्पन्न हुआ उन्होंने वसिष्ठ से कहा कि यह उलटा कार्य्य क्यों हुआ मैंने जो पुत्र की प्राप्ति के लिये यज्ञ किया था उससे पुत्री उत्पन्न क्यों हुई वसिष्ठ जी ने उत्तर दिया कि होता (आहुति देने वाले) के उलटे संकल्प से यह उलटा फल हुआ परन्तु मैं अपने तेज से तुमको सपुत्र करूंगा ऐसा कह के वसिष्ठ ने विष्णु की स्तुति की उससे प्रसन्न होके जो विष्णु ने वर दिया उसी वर के प्रताप से मनु की पुत्री इला पुरुष हो गई और उसका नाम सुद्युम्न रक्खा गया ॥२१।२२॥

तस्मैकामवरं तुष्टो भगवान् हरिरीश्वरः।
ददाविलाऽभवत्तेन सुद्युम्नः पुरुषर्षभः ॥२२॥

नोट—न जाने हमारे पौराणिक भाई इस विचित्र रीति से अब क्यों नहीं कार्य्य लेते। देखिये लड़की को पुत्र कर देने का क्या सरल उपाय है?

व्यास जी का पुत्र की इच्छा से भगवती महादेव का तप करना और महादेव से वर पाना फिर घृताची को देख कामातुर हो-वीर्य्यपात हो अरणी में गिरना और शुक का उत्पन्न होना।

देवी भागवत स्कन्द १ अ० १० ॥

मेरु पर्वत पर व्यास जी ने एकाक्षरी मन्त्र जप भगवती और शिव का ध्यान निराहार सौ वर्ष तक किया कि जिसमें हमारे अग्नि, वायु अन्तरिक्ष के

तुल्य पुत्र उत्पन्न हो इसको देख इन्द्र बड़ा व्याकुल हुआ और वह महादेव के पास गया तब महादेव जी ने कहा तुम संशय मत करो क्यों कि वह शक्ति सहित हमारा पुत्र के हेतु तप करते हैं इन्द्रासन के लिये नहीं तुम कुछ चिन्ता न करो हम जाते हैं। यह कह व्यासजी के पास पहुंचे और कहा सब गुण सम्पन्न तुम्हारे पुत्र होगा वह तपस्या करते रहे एक दिन अरणी सहित गुप्त अग्नि को अग्नि की इच्छा करके मथने लगे उसी समय में पुत्र होने की इच्छा हुई जैसे मंथान और अरणी के संयोग और मंथन से अग्नि उत्पन्न होती है वैसे ही हमारे क्योंकर पुत्र उत्पन्न हो सकता है क्योंकि स्त्री तो हमारे है ही नहीं और स्त्री करना बंधन का हेतु है देखो शिवजी ऐसे महात्मा सो भी नित्य कामिनी की फांस में फंसे रहते हैं इस चिन्ता में लग रहे थे कि इतने में घृताची नाम अप्सरा दिव्य रूप धारण किये हुए आकाश में दीख पड़ी मुनि जो धृतव्रत थे कामातुर हो चिन्ता करने लगे कि अब मैं क्या करूं यह मुझे छलने के लिये आई है सम्पूर्ण महात्मा और तपस्वी मुझे हंसेंगे देखो १०० वर्ष तपस्या करके भी काम के वशीभूत होगये इसके उपरांत यह गृहस्थाश्रम के सुख जो पुत्र उत्पन्न होने के समय होते हैं वह भी इससे न होगा क्योंकि यह तो भोग भुगाकर आकाश को चली जायगी इस लिये उन्होंने कहा कि यह हमारे योग्य नहीं है अप्सरा श्राप के भय से शुकीका रूप धारण करके निकल गई व्यासजी बड़े विस्मित हुये कामातुर तो हो ही गये थे बहुत मन खींचने पर भी न खिंचा मुनि का वीर्य्य अरणी (ढाक की लकड़ी) में पतित हो गया वह अधिक अरणी को मथने लगे उसमें व्यासजी के आकार का पुत्र उत्पन्न हुआ। शुकी को देखकर पतित हुआ इस लिये पुत्र का नाम शुक रक्खा। सब देवताओं ने आकाश से वर्षा की और प्रसन्न हो सब उनके स्थान पर आये वह बढ़ने लगे वेद विधि से मुनि ने यज्ञोपवीत कराया और बृहस्पति को गुरु करके चारो वेद षट् शास्त्र पढ़े और गुरुदक्षिणा देकर पिता के पास आये।

नोट—इस कथा के देखने से ज्ञात हुआ कि इन्द्र एक क्षुद्र कोटि का राजा और तपस्वियों का बहुतायत से विरोधी था जैसा उसके आचरणों से विदित होता है।

(२) क्या व्यासर्षि ऐसे अज्ञ थे कि बिना स्त्री के पुत्र की कामना की ?

(३) अरणी अर्थात् ढाक की लकड़ी पर·······१··पात होने से पुत्र उत्पन्न हो गया ?

(४) 'शुचिर पूती भावे' धातु से शुक्र शब्द बनता है यदि शुकी को देख कर शुक नाम रख लिया तो रेफ की अनुवृत्ति कहां से आई जोकि शुक्र कहा जाता है [illegible] पौराणिकी इसे सिद्ध करें ?

पाराशर मुनि की अनोखी करतूत और महर्षि व्यासकी विचित्र उत्पत्ति ।

एक उपरिचर नाम चेदिदेश के राजा हुये जोकि अति धार्मिक धर्मात्मा और द्विजपूजक थे, इनकी तपस्या से संतुष्ट होकर इन्द्र ने इन्हें स्फटिकमणि का एक विमान दिया जिस पर चढ़ कर वह अंतरिक्ष में फिरा करता था। इनकी स्त्री का नाम गिरिका था जिसमें उन्होंने ५ पुत्र उत्पन्न करके अन्य २ देशों के राजा कर दिये थे फिर एक दिन गिरिका ऋतुस्नाता थी उसी दिन राजा के पिता ने कहा कि श्राद्ध करने लिये मृग मारलाओ यह बड़ा धर्म संकट हुआ। देवी भागवत स्कन्द २ अध्याय १ ॥

> सुन ऋतुमति नारि नहिं जाई। गर्भवान पातक त्यहि भाई।
> पिता वचन माने नहिं जोई। पापपुञ्ज ताहू कहैं होई ॥

पर वे पिता के वचन मान शिकार करने ही चले गये, वहां बन में जाकर जिससे कि ऋतुस्नाता स्त्री का स्मरण था इससे वीर्य्य च्युत हुआ उससे यह विचार के कि स्त्री के निकट भेजेंगे राजा ने बरगद के पत्तों के दौने (मध्य) में स्थापित कर दिया कि हम सब अमोघ वीर्य्यवान हैं जो यहां से वीर्य्य प्रेरित करेंगे तो पुत्र ही होगा। एक बाज जो राजा करके पालित संग ही था उस से कहा कि इसे हमारी स्त्री के निकट पहुंचाओ, यह सुन वह चोंच से कन्दकुक्त वट पत्र को लेके आकाश मार्ग हो उड़ा कि अन्य कोई बाज मांस जान के छीनने लगा इस पर बड़ा युद्ध हुआ और वह वटपत्र का दौना यमुना जी में गिर पड़ा

बाज जहां के तहां चले गये, उसी समय एक अद्रिका नाम अप्सरा (जो कि यमुना में स्नान कर रही थी) ने एक ब्राह्मण (जोकि संध्या करने में उद्यत थे) के चरण कामातुर होकर आ पकड़े ब्राह्मण ने शाप दिया कि तू मछली हो वह यमुनाजी में मछली हो पतित (गिर पड़ी) हुई और उसी समय उस दोने का वीर्य खा गई दश मास के पश्चात् किसी मत्स्यघाती ने उसे पकड़ उदरविदारण किया तो दो मनुष्याकार जीव निकले कि जिन में एक पुत्र और एक कन्या थी, उन्हें देख विस्मित होकर उन्हीं राजा उपरिचर के पास ले गया क्योंकि वह राजा ही के आकार के से थे, इस से पुत्र को अपने सदृश समझ के राजा ने ग्रहण किया बालक तो अति धार्मिक सत्यसागर, महातेजस्वी और निज पिता के तुल्य पराक्रमी मत्स्य नाम राजा हुआ और जो कन्या थी वह उसी मत्स्य-घाती को देदी कि जिसके काली मत्स्योदरी मत्स्यगंधा वासवीय नाम हुए।

एक दिन तीर्थ यात्रा करते हुए पाराशर मुनि आये और खेवट से कहा हमें यमुना पार करा वह भोजन कर रहा था उसने मत्स्यगंधा से कहा तू पार पहुंचा दे मुनि उसे देख कामातुर हो हाथ पकड़ अपना मनोरथ कहा तब वह बोली आप अतिकुलीन वसिष्ठजी के पुत्र वेदपाठी होकर मछली की गंध के समान स्त्री को देख कामातुर होकर ग्रहण करते हो यह महाअनर्थ है तब लज्जित होकर हाथ छोड़ दिये फिर पार पहुंच पकड़ने लगे फिर उसने प्रार्थना की कि आप मुझ दुर्गन्धा में कैसी रुचि करते हो. तब मुनि ने अपने तपोबल से उसके अंग में ऐसा सुगन्ध करदी जो चार कोस तक कस्तूरी के समान फैल गई तब उसने कहा कि इस पार से मेरा पिता देख रहा है और दिन में रति करना भी निषिद्ध है इससे रात होने दीजिये यह सुन मुनि ने अपने तपोबल से कुहरा उत्पन्न कर दिया और प्रसंग करना चाहा तब उसने कहा मेरा अभी विवाह नहीं हुआ है आप वीर्यवान् हैं रति के पीछे मैं गर्भवती हो जाऊंगी तो मैं कहां जाऊंगी और पिता से क्या कहूंगी मुनि ने कहा कि तुम कन्या ही बनी रहोगी यह सुन उसने कहा कि नहीं महाराज मैं यह चाहती हूं कि मेरे पिता को विदित न हो और आपके समान पुत्र उत्पन्न हो और यह अंग का गन्ध और मेरी नवकन्या बनी रहे तब मुनिने कहा तुम्हारे विष्णु के अंश से सब पुराणों का कहने हारा पुत्र उत्पन्न होगा जो त्रिलोकी में प्रसिद्ध होगा यह कह

उससे सम्भोग कर यमुना में स्नान करने चले गये सत्यवती गर्भवती हुई समय पर यमुना के द्वीप में पुत्र उत्पन्न किया जो जन्मतेही माता से बोले हम तपस्या करने जाते हैं तुम सुख पूर्वक जाओ जब कभी हमको स्मरण करोगी तभी हम आकर तुम्हारी मनोकामना सिद्ध करेंगे यह कह कर चले गये तब इनका नाम द्वैपायन हुआ इन्हीं ने वेदशाखा निर्मित की तो व्यास नाम हुआ, सर्व पुराण महाभारतादि की रचना की तथा इन्होंने ही वेदों के विभाग कर अपने शिष्यों को पढ़ाये।

नोट–१–एक ओर मनु का यह वचन कि "अहिंसा परमो धर्मः" दूसरी ओर पौराणिकी शिक्षा कि "श्राद्धार्थ मृग मार कर लाओ" हमारे वैष्णवी भाई किसको ग्रहण करेंगे?

२–इन घृणित बातों को बच्चे भी तो कहते और करते लज्जित होंगे क्या यह कोई ऐसी वस्तु है जो भेजी जावे परन्तु इस घृणित और असम्भव बात पर वाद करना ही वृथा है बुद्धिमान केवल संकेत से ही इन का निर्णय कर लेंगे?

३–ब्राह्मण के शाप से स्त्री मछली होगई और पत्ते में रक्खे हुए............ को खाकर मछली गर्भवती हो गई प्यारे पौराणिकी भाइयो यह व्यास महात्मा की उत्पत्ति और महर्षि पाराशर की करतूत है क्या यह सब बातें ऋषिनिन्दक नहीं हैं इस लिये इन पुराणों को व्यासकृत न कहिये।

राजा शान्तनु का [illegible] करना।

शान्तनु नाम राजा एक दिन शिकार खेलते हुए यमुना के तीर पर गये वहाँ कस्तूरी मालती के समान सुगन्ध आई राजा जिसको सूंघ चौकन्ने हो नदी की ओर गये तो वहाँ जाकर देखा कि नदी के तट पर एक स्त्री शृङ्गार रहित मलीन वस्त्र धारण किये बैठी है और उसी के शरीर से गन्ध आ रही है राजा ने इसका रूप यौवन देख कामवश हो गंगा का स्मरण कर उससे पूछा कि

तुम किसकी कन्या हो, विवाह हो गया है या अभी नहीं, तुमको देख हमारा चित्त चाहता है कि तुम हम को अपना पति बनाओ क्योंकि हमारी स्त्री हमको छोड़ कर चली गई है दूसरी अभी नहीं की है मैं तुम्हारा दास हूँ तब वह स्त्री बोली कि मैं दक्ष की कन्या हूँ मेरा पिता घर गया है मैं नौका चलाती हूं यदि आपकी ऐसी इच्छा हो तो मेरे पिता से कहिये। वे आपको दे देंगे तो मैं आनन्द से आपकी दासी होने को उद्यत हूँ राजा ने पिता के समीप जाकर कहा कि हे निषाद! तुम हमको अपनी पुत्री दे दो मैं पटरानी बनाऊंगा तब निषाद ने कहा कि मैं पुत्री आपको इस प्रण पर देने को उद्यत हूँ कि आपके पीछे मेरी पुत्री का पुत्र ही राजा हो। राजा इसको सुन गृह पर आ उदास रहने लगा, जिसका वृत्तान्त जब भीष्म महाराज को (जो गंगा के पुत्र थे) ज्ञात हुआ उन्होंने पिता की इच्छा पूर्ण करने के अर्थ आजन्म जितेन्द्रिय रहने का व्रत धारण कर दक्ष से जाकर निवेदन किया उसने पुत्री राजा शान्तनु को दे दी। देवी भागवत स्कन्द २ अ० ५ ॥

नोट—इस खेवट जाति की कन्या को प्रथम तो पाराशर ने भोगा फिर उसी से शान्तनु ने विवाह किया पक्षपात को छोड़ सत्य पूर्वक विचारो तो केवल वर्ण से जाति के मानने वाले पौराणिकी भाई व्यास मुनि की उत्पत्ति पर ध्यान दें और उनके जार पिता पाराशर की करतूत को विचारें?

श्री पं० जी ने—कहा कि सेठ जी समय बहुत हो गया है इस लिये बस कीजिये।

आर्य्य सेठ—बहुत अच्छा सब महाशयों ने चलने की तैयारी की।

सेठजी—ने पण्डित जी तथा सब महाशयों को नमस्ते की।

पं० जी—ने आयुष्मान् कहा और अन्य सबों ने यथा योग्य की और प्रस्थान किया, सेठ जी विश्राम करने लगे।

॥ इति सप्तदश परिच्छेद ॥
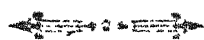
अथ [illegible] परिच्छेद ।

सेठजी—ने श्रीमान् पं० जी को आते देख नम्रता पूर्वक नमस्ते कर कहा

पं० जी—ने आयुष्मान कहा और विराजमान हुये, थोड़ी देर के बाद सब महाशय भी आ गये और यथायोग्य कहा और विराजमान हुये।

सेठजी—पं० जी महाराज आज मैं और दिनों से रोचक ही नहीं किन्तु अनोखी कथाएं सुनाता हूं। देखियेः—

विनता से अरुण और गरुड़ का उत्पन्न होना

प्रजापति कश्यप जी ने पुत्र की इच्छा से यज्ञ किया उस समय देवता, ऋषियों और गन्धर्वों ने भी उनकी सहायता की, कश्यप जी ने यज्ञ की लकड़ी लाने के लिये इन्द्र और वालखिल्य मुनि और अन्य देवों को भेजा इन्द्रादि देवता अपनी शक्ति के अनुसार पर्वत के समान लकड़ी का बोझा लेकर बिना कष्ट आने लगे परन्तु सब ऋषियों ने मिलकर भी एक छोटीसी लकड़ी को अति-कष्ट से ले जाने लगे इन्द्र जी इन ऋषियों को देख अचरज मानके उनकी हंसी करते हुए लांघकर वेग से चले गये जिससे बड़े २ ऋषियों ने अति दुखी और क्रोधयुक्त होकर इन्द्र के भयदायी एक महान् कार्य का अनुष्ठान किया अर्थात् वे व्रतशील ऋषिगण अपने तपोबलसे इन्द्र से सैंकड़ों गुण शूरता और वीरतामें एक इन्द्र और उत्पन्न करने के लिये बड़े २ मन्त्रों से अग्नि में आहुति चढ़ाने लगे जिसको सुन इन्द्र ने बहुत दुःखी हो फिर प्रजापति की शरण ली।

कश्यपजी वालखिल्य आदि मुनियों के समीप गये और पूछा कि क्या आप लोगों का कार्य्य सिद्ध हो गया उन्होंने कहा कि हां हुआ है तब कश्यप जी ने कहा कि ब्रह्मा जी की आज्ञा से इन्होंने इन्द्र का पद पाया है आप लोग दूसरे इन्द्र की चेष्टा कर रहे हैं इस लिये आप को ब्रह्मा की बात झूठी न करनी चाहिये और मैं आपके संकल्प को भी मिथ्या नहीं बनाना चाहता आप जिसको

इन्द्र बनाना चाहते हैं वह महाबली वीर्य्यशाली पुरुष पक्षियों का इन्द्र होवे यही देवराज इन्द्र आप से प्रार्थना कर रहे हैं आप उन पर प्रसन्न होवें तब उन मुनियों ने कश्यपजी से कहा कि हम सबों ने इन्द्र की उत्पत्ति के निमित्त और आपकी सन्तान के उपजाने के हेतु इस यज्ञ का आरम्भ किया है सो हमारे कर्म फल को लेकर जो कुछ अच्छा जान पड़े वही कीजिये। इसी काल में यशस्विनी दक्ष पुत्री वनिता ऋतु स्नान पूर्वक व्रत करके शुचि होकर पुत्र की कामना से पति के पास गई। कश्यपजी ने उससे कहा देवि! तुम जो चाहती हो वह पूरा होगा मेरे संकल्प और बालखिल्या मुनि के तपोबल से तुम्हारे गर्भ से बड़े भाग्यवान तीनों भवन में प्रधान दो पुत्र उत्पन्न हो त्रिलोक में पूजे जावेंगे। भगवान कश्यपजी फिर वनिता से बोले, प्यारी! तुम अप्रमत्त होकर अपने सुमहान गर्भ को धारण किये रहना क्योंकि यह लोकों में माननीय महावीर कामरूपी दोनों पक्षी सम्पूर्ण पक्षियों पर अधिकार फैलाये रहेंगे। अनन्तर कश्यप प्रजापति हृदय से देवराज से बोले कि पुरन्दर! तुम्हारी सहायता करने वाले दो पुत्र उपजेंगे तुम सदा इन्द्र बने रहोगे तुम कभी ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मणों का अपमान न करना यह सुन इन्द्र स्वर्ग को चले गये। समय आने पर वनिता ने अरुण और गरुड़ यह दो सन्तानें प्रसव कीं जिनमें अरुण विकलांग होकर सूर्य्य के सारथी बने और गरुड़ पक्षियों के इन्द्र पद पर बैठे।

महाभारत आदि पर्व अ० ३१ ॥

नोट—श्री पण्डित जी देखिये यहां वनिता नाम की स्त्री के गर्भ से दो पक्षी उत्पन्न हो गये। इस सिद्धान्त ने मिस्टर डारविन साहिब को भी जो वह लिखते हैं कि चतुष्पक्षियों से क्रमशः चतुर्भोस्कन्नि हो गई मात कर दिया क्योंकि यहां तो डाइरेक्ट स्त्री के गर्भ से पक्षी उत्पन्न कर दिये इसी से तो हम कहते हैं कि आप इन प्रमाणों पर विचार करें

कचका अद्भुत दृश्य।

महाभा० आदि प० अ० ६ जब देवताओं और राक्षसों में संग्राम हुआ तब देवों ने अंगिरा के पुत्र बृहस्पति और असुरों ने शुक्र को पुरोहित किया, देवता युद्ध में जितने दानवों को मारते शुक्राचार्यजी संजीवनी विद्या से उनको

जीवित कर देते थे परन्तु बृहस्पति को यह विद्या नहीं आती थी इससे देवगण अत्यन्त दुखी होते थे तब देवों ने बृहस्पति के बड़े पुत्र कच के निकट जाकर कहा कि हम आपकी शरण हैं अब बचाओ सहायता करो अर्थात् तेजस्वी शुक्र में जो विद्या है उसको जाकर सीख आओ हम आपको यज्ञांश देंगे तुम्हीं उनकी पुत्री देवयानी की उपासना कर सकोगे और वह भी तुम्हारे आचार विचार से संतुष्ट हुये तो तुम संजीवनी विद्या को अवश्य ही प्राप्त होगे यह सुन कच ने शुक्रजी के पास जाकर कहा कि मैं अंगिरा का पौत्र और बृहस्पति का पुत्र हूँ और मेरा नाम कच है आप मुझको शिष्य बनाइये मैं सहस्रों वर्ष तक ब्रह्मचर्य धारण करूंगा आप आज्ञा कीजिये शुक्र बोले तुम्हारा कल्याण होय तुम्हारी बात मानली, वह वहाँ रह कर कार्य्य करने लगे इस बीच में देवयानी कच से और कच देवयानी से भी प्रसन्न रहते तब व्रतानुष्ठान करते २ पांच सौ वर्ष व्यतीत हो गये तब एक दिन कच निर्जन बन में गौ की रखवाली कर रहे थे दैत्यों ने यह जान कर कि यह कच है और संजीवनी विद्या के अर्थ आये हैं क्रोध कर मार डाला और उनको टुकड़े २ कर स्यार और कुत्तों को दे दिया।

हत्वा शालावृकेभ्यश्च प्रायच्छंस्तिलशः कृतम् ॥२६॥

इतने में गौयें घर पर आईं और कच नहीं आये तब थोड़ी देर देखकर देवयानी ने अपने पिता शुक्र से कहा कि सूर्य छिपा चाहते हैं गौ घर आ गईं परन्तु कच नहीं आये पिता जी मुझको निश्चय जान पड़ता है कि कच मारे गये सत्य कहती हूँ बिना कच के नहीं जी सकती शुक्र बोले कच चले आओ तुम मरे हो मैं तुमको जिलाता हूँ यह कहकर मृतक संजीवनी विद्या पढ़ कर कच को बुलाया कच बुलाये जाते ही स्यार कुत्तों के शरीर को फाड़ और निकल कर आ पहुंचे और संजीवनी विद्या का प्रभाव देख कर प्रसन्न हुए देवयानी ने उनसे पूछा कि इतनी देर क्यों हुई उसने कहा मेरी गौ एक वृक्ष की छाया में थी असुरों ने देख मुझसे पूछा कि तुम कौन हो मैंने कहा कि मैं कच हूँ दानवों ने मार कर मेरे टुकड़े २ कर स्यार कुत्तों को खिला दिये। अनन्तर देवयानी की आज्ञानुसार कच फूल बटोरने के लिये किसी बन को गया दानवों ने फिर भी उसको देख—

वनं ययौ कचोविप्रो दृष्टशुर्दानवाश्चते ।
पुनस्तं पेषयित्वा तु समुद्राम्भस्यमिश्रयन् ॥४०॥

पीसकर समुद्र के जल में घोल दिया अनन्तर देवयानी ने उनको देर तक न आते देखकर पिता को वह समाचार सुनाया इससे फिर शुक्र विद्या के बल से बुलाये गये उन्होंने वह सब हाल कह सुनाया इसके पीछे तीसरी वार उनको वैसेही देख कर जला कर चूर २ कर मदिरा से मिलाकर उन शुक्र ही को दे दिया आगे देवयानी ने फिर पिता से कहा कि मैंने कच को फूल बटोरने के लिये भेजा था अब भी आते नहीं दीखते मुझको निश्चय जान पड़ता है कि वह मरे या मारे गये मैं निश्चय कहती हूँ उस कच के विना मैं न जीऊंगी। शुक्र बोले बेटी बृहस्पति का पुत्र कच मारा गया विद्या के बल से जिलाता हूँ तिस पर भी असुर लोग मार डालते हैं देवयानी तुम शोक न करना उसको जीवित रखना मेरा असाध्य हो गया है तब देवयानी ने कहा कि मैं बिना भोजनों के रहूँगी क्योंकि उनका स्वरूप मुझे बड़ा प्रिय था तब शुक्र दैत्यों पर अप्रसन्न हुए और संजीवनी विद्या से कच को बुलाया कचने गुरु के पेट में रह कर गुरुहत्या के भय से भयभीत होकर धीरे २ उत्तर दिया तब शुक्र ने कहा तुम कौन पथ से मेरे पेट में जा घुसे हो कच बोले कि हे गुरु ! आप की कृपा से मेरी स्मरण शक्ति लुप्त नहीं हुई जो जिस प्रकार से हुआ वह सब स्मरण है इस लिये कि कहीं हमको गुरु के पेट फाड़ने के लिये पाप की कीचड़ में डूबना न पड़े इस लिये पेट में बसने का अपार कष्ट सह रहा हूँ असुर ने मुझ को मार जलाय और चूर २ कर मदिरा में घोलकर आपको दे दिया था पर हे पूज्य ! आपके रहते आसुरिक माया क्योंकर ब्राह्मणिक माया से बढ़ सकेगी तब शुक्र ने देवयानी से कहा बेटी देवयानि ! इस समय तुम्हारा प्रियानुष्ठान करूं मेरे नाश होने से कच जी सकता है क्योंकि कच मेरे पेट के भीतर है मेरे बिना पेट फाड़े नहीं निकल सकेगा देवयानी बोली कच का नाश और आपकी मृत्यु यह अग्निवत् दोनों शोक ही मुझको जलाने लगे हैं कच के नाश होने से मेरा जीवन न रहेगा आपको कोई हानि पहुंचने से भी जी नहीं सकती, तब शुक्र ने कच से कहा कि हे बृहस्पति पुत्र कच ! देवयानी के प्रेमी हो देवयानी

भी तुमको भज रही है ऐसी दशा में यदि तुम कचस्वरूप इन्द्र न हो तो आज सञ्जीवनी विद्या तुमको देता हूँ ब्राह्मण के विना दूसरा जन मेरे पेट में घुस के फिर जीवन पाकर नहीं निकल सकता सो तुम यह विद्या लो मैं तुमको जीवन देता हूँ बेटा मेरी देह से निकल कर हे पुत्र मुझको जिलाना और गुरु से विद्या लाभ करके विद्यावान होकर धर्म पथ पर दृष्टि रखना अकृतज्ञ न होना कच ने गुरु से संजीवनी विद्या लाभ कर जिस प्रकार पूर्णमासी के दिन सूर्य के अस्त होने पर पूर्ण चन्द्रमा प्रकट होता है उसी भांति शुक्र की कोख को फाड़ कर उसी क्षण साक्षात् निकल आये ।

गुरोः सकाशात् समवाप्य विद्याम् ।
भित्वा कुक्षिं निर्विचक्रामविप्रः ॥५६॥

अनन्तर ब्रह्मपुंज शुक्राचार्य जी को मरे और गिरे हुए देखकर संजीवनी विद्या से उनको जिलाये और उठा करके उस सिद्ध संजीवनी विद्या को प्राप्त कर गुरु को भक्ति से प्रणाम कर अपने घर को आये, यही कथा मत्स्यपुराण अ० २५ में भी लिखी है ।

नोट—पं० जी उपरोक्त कथा पर आप विचार करें क्या आपकी सम्मति में यह होना सम्भव है इसके अतिरिक्त शुक्राचार्य्य राक्षसों के पुरोहित थे तो क्या वह नर मांस के खाने वाले भी थे क्योंकि जब राक्षसों ने कच को चूरण कर और तीसरी वार उसके शरीर को जला मदिरा में मिला गुरु शुक्राचार्य्य को पिला दिया, उस समय उनको मनुष्य शक्ति की गन्ध भी नहीं आई ? पेट में बोलना कोख फाड़ कर निकलना इन असम्भव बातों का क्या ठीक ? यदि मान भी लिया जावे कि ऐसी संजीवनी विद्या शुक्राचार्य्य के पास थी तो महाभारत में मृतक देवासुरों को क्यों नहीं जीवित कर दिया हमारी सम्मति में वर्तमान सनातनधर्मी इस मृत संजीवनी विद्या की खोज कर मृत पितरों को जीवित कर दिया करें तो बड़ा ही उपकार हो ।

वृद्धावस्था के बदले युवावस्था ।

राजा नहुष के पुत्र ययाति सम्राट हुए, जिन्होंने पृथिवी का पालन कर अनेक यज्ञ किये जिनके देवयानी, के गर्भ से यदु और दुर्वासा, शर्मिष्ठा के

गर्भ से द्रुह्य, अनु और पुरु उत्पन्न हुए । राजा बहुत काल तक राज्य करते रहे अन्त को कठोर जरा से पकड़े गये तब राजा ने यदु, पुरु, दुर्वासा, दुह्य और अनु इन पाँचों पुत्रों को बुलाकर कहा कि मैं युवापन प्राप्त कर मनमाना भोग करना चाहता हूँ, तुम मेरा बुढ़ापा ले लो तो मैं तुम्हारे यौवन से बहुत काल तक सुख भोगूं मैं दीर्घयज्ञ में दीक्षित था उस काल में मुनि शुक्राचार्य्य के शाप से जराग्रस्त हुआ हूँ इस लिये मैं संतापित हो रहा हूँ परन्तु किसी ने भी स्वीकार न किया तब छोटे पुत्र सत्यविक्रमी पुरु ने कहा कि आप मेरे यौवन को ले नये शरीर में विराजिये मैं आपकी आज्ञा से जरा लेकर राज्यशासन करता हूँ यह सुन राजा ने तप और वीर्य्य के बल से उस महात्मा पुत्र में बुढ़ापा प्रविष्ट कराया राजा अपने पुत्र पुरु का यौवन पा युवा बने और पुरु ययाति की वृद्धावस्था लेकर राज्यशासन करने लगे ।

ए[illegible] महातपाः ।
सं[illegible] महात्मनि ॥२४॥

जब राजा को इस नये शरीर में दो पत्नियों से आनन्द करते हुए सहस्र वर्ष व्यतीत हो गये और भोगों से तृप्त न हुए तब बुद्धि से यह विचारकर कि आग में घृत छोड़ने से जिस प्रकार अग्नि बढ़ती है उसी प्रकार कामोत्पादक वस्तुओं के देखने से काम बढ़ता ही है इसी तरह अनेक प्रकार से मनको समझाकर अपने पुत्रको यौवन दे बुढ़ापा ले लिया ।

महाभारत आदि पर्व अ० ८४ ॥

नोट—कहिये पंडित जी ! आप की बुद्धि में यह आता है कि पिता ने बुढ़ापा दे पुत्र का यौवन ले लिया हो ? यदि ऐसा उस समय सम्भव था तो फिर क्यों कर्मों का फल हो जाता था ? पं० जी ! पुराणों के लेखों को कभी आपने विचारा ही नहीं । इनका परस्पर मिलान महर्षि स्वामी दयानन्दजी ने ही किया तिस पर भी आप सब अप्रसन्न होते हैं ।

सौ पुत्रों की अद्भुत उत्पत्ति

एक समय भगवान द्वैपायन भूख और थकावट से कातर होकर गांधारी के पास आये गांधारी ने उनको सन्तुष्ट किया जिससे व्यास ने गांधारी की प्रार्थना के अनुसार यह वर दिया कि तुम्हारे पति समान वीर्य्यवान सौ पुत्र उत्पन्न होंगे यथा समय गांधारी गर्भवती हुई गर्भ स्थिति के पीछे दो वर्ष बीत गये पर सन्तान नहीं हुई इससे वह बड़ी दुखी होने लगी आगे यह सुन कर कुन्ती के सूर्य्य के समान पुत्र उत्पन्न हुए हैं अपने गर्भ को स्थिर देख चिन्ता और अति मानसिक पीड़ा से व्याकुल होकर धृतराष्ट्र से छिपकर यत्न पूर्वक अपने पेट में अघात किया उससे दो वर्ष का वह गर्भ कड़ी हुई लोहे की गेंद के समान मांस पेशी स्वरूप में भूमि पर गिरी त्यों ही व्यास जी यह जान वहां पहुंचे और उसको देख कर कहा कि तुमने यह क्या किया है गांधारी ने कहा कि कुन्ती के सूर्य्य के समान पुत्र उत्पन्न हुए सुनकर अति दुःख से मैंने पेट में चोट मारी आपने पहिले मुझको वर दिया था कि सौ पुत्र उत्पन्न होंगे अब सौ पुत्रों के बदले माँस की पेशी पैदा हुई है तब व्यास जी ने कहा कि जो कहा सो ही होगा घृत के सौ घड़े भरकर अलग २ यत्न से रक्खो और ठंडे जल से इस मांस पेशी को सिंचवाओ इसके अन्दर सिंचवाने २ मांस पेशी बहुत हिस्सों में बट गई और प्रत्येक भाग अंगूठे के पोरे के समान हुआ अनन्तर वह सब मांस पेशी घृत भरे घड़ों में रक्षित होकर अच्छे गुप्तस्थान में भली भांति रक्खी जानें लगीं। महाभारत आदि पर्व अ० ११५ ॥

स्वनुगुप्तेषुदेशेषु रक्षा वैव्यदधात्ततः ॥२१॥

व्यास जी ने कहा कि दो वर्ष के पीछे यह सब घड़े खोलना यह कह तप के लिये चलेगये फिर योग्य काल में उन टुकड़ों से पहले राजा दुर्योधन का जन्म हुआ और एक महीने के अन्तर धृतराष्ट्र के सौ पुत्र और कन्याने जन्म लिया।

नोट—पं० जी इस पर आप स्वयं विचार करें ?

कृपा कृपी की विचित्र उत्पत्ति ।

एक समय गौतम मुनि तपस्या में दृढ़ता से लग रहे थे तब देवराज ने जानपदीनाम्नी देवबाला को भेजा वह उनके आश्रम पर पहुंच उनको लुभाने लगी गौतम ने उस परम सुन्दरी को देखा तो उनके नेत्रों में प्रफुल्लता छा गई और उनके हाथों से धनुषबाण धरती पर गिर पड़ा देह कांपने लगी तो भी उत्तम ज्ञान और तपस्या में दृढ़ प्रतिज्ञा रहने से वह उत्तम धीरज धरे रहे परन्तु उसके देखने मात्र के विकार ही से उनका वीर्य्य गिर गया था पर वह उस बात को नहीं जान सके अनन्तर धनुषबाण कृष्णसार मृग का चर्म और उस आश्रम और अप्सरा को तजकर अन्य स्थान में चले गये उनका वीर्य्य एक सरकण्डे की लकड़ी पर गिरा उसके दो भाग हो गये और उससे एक पुत्र और एक कन्या का जन्म हुआ । आदि पर्व अ० १३०॥

जगामरेतस्तत्तस्य शरस्तम्बे पपात च ॥१२॥
शरस्तम्बे च पतितं द्विधातदभवन्नृप ।
तस्याथ मिथुनं जज्ञे गौतमस्य शरद्वतः ॥१३॥

अनन्तर मृगया के लिये मन माने घूमने वाले महाराज शान्तनु के एक सैनिक ने वन में उस पुत्र और कन्या को देखा । धनुर्बाण और मृग का चर्म देखकर उसने समझा कि यह दोनों धनुर्वेद में दक्ष किसी ब्राह्मण की सन्तान हैं तब उस सैनिक ने धनुर्बाण और दोनों बच्चों को लेजाकर नरनाथ को दिखलाया उन्होंने यह कह कर कि यह मेरी सन्तान हैं ले लिया और उनके सब संस्कार किये चूंकि राजा ने कृपापूर्वक उनको पाला था इस लिये उनका कृपा और कृपी नाम रक्खा ।

नोट—यह कथा उससे भी अद्भुत है वहां तो रसौली को घड़े में रखने से पुत्रोत्पत्ति हुई परन्तु यहां सरकण्डे के ऊपर....गिरने से पुत्र और कन्या की उत्पत्ति हो गई । प्यारे पं० जी ! कुछ तो विचारिये मूर्ख से मूर्ख किसान भी इस बात को जान सकता है कि अंकुरोत्पत्ति जब ही होती है जब कि पृथवी और बीज रीत्यानुसार मिलते हैं न कि विपरीत रीति से ?

हरिणी के गर्भ से ऋषिशृंग का जन्म ।

कश्यप मुनि एक नदीग के निकट तपस्या करते थे बहुत काल बीतने पर एक दिन जल में स्नान करते समय उर्वशी अप्सरा को देखते ही उनका वीर्य्य स्खलित हो गया उस वीर्य्य को एक हरिणी पी गई वह बहुत प्यासी थी इस लिये गर्भिणी हो गई वह पहिले जन्म की देव कन्या थी जो ब्रह्मा के शाप से हरिणी बनी थी और ब्रह्मा ने उससे यह भी कह दिया था कि जब तेरे गर्भ से मुनि का जन्म होगा तबही तू इस योनि से छूटेगी ब्रह्मा का ऐसा वचन अमोघ होने के कारण उस हरिणी के गर्भ से महा मुनि शृंगी ऋषि का जन्म हुआ ।

तस्यां मृग्यां समभवत्तस्यपुत्रो महानृषिः ।
ऋष्यशृंगस्तपोनित्यो वनएवाभ्यवर्तत ॥३५॥

जो तप करने के कारण सदा वन ही में रहने लगे ।

तस्यर्षेः शृङ्गशिरसिराजन्नासीन्महात्मनः ॥३६॥

हे राजन् ! महात्मा ऋष्यशृंग के सिर पर दो सींग थे इस लिये उनका यह नाम हुआ । वन पर्व अ० ११० ॥

पण्डित जी ! और लीजिये हरिणी से मनुष्य की उत्पत्ति होने लगी अब क्या अब तो जिससे चाहे मनुष्य उत्पन्न कर लीजिये ।

युवनाश्व की कोख से सन्तानोत्पत्ति ।

इक्ष्वाकुवंश में युवनाश्व नामक एक राजा हुए जिन्होंने अनेक यज्ञ किये थे परन्तु कोई पुत्र न था । राजा ने अपना राज्य मंत्रियों को दे आप वनवास को चले गये । एक दिन भूख प्यास से व्याकुल हो भृगु आश्रम में पहुंचे और उसी रात्रि में भृगु ने सौद्युम्न राजा के वास्ते पुत्रेष्टि यज्ञ कराया था राजा युवनाश्व सौद्युम्न से पहिले उस आश्रम में पहुंचा जहां मंत्र से पवित्र किये हुए कलश में जल भरा रक्खा था ऋषि लोग थक कर सब सो गये थे, राजा ने

जाकर उसी समय ऋषियों से जाकर जल मांगा परन्तु सूखे कण्ठ का कोमल शब्द ऋषियों ने न सुना तब राजा ने कलश के पास जाकर जल पी लिया और बहुत शान्त हुआ जब ऋषि उठे तो उन्होंने कलश को जल से खाली देखा और सब लोगों से पूछा कि यह किसका निन्दित कर्म है राजा युवनाश्व ने कहा कि यह मेरा कर्म है तब भृगु ने कहा कि यह कर्म तुमने अच्छा नहीं किया यह जल पुत्र के वास्ते मंत्रों से शुद्ध किया गया था मैंने तप करके पुत्रके वास्ते यह जल रक्खा था। इस लिये तुम्हारे अतुल पराक्रमी पुत्र होगा जो अपने बल से इन्द्र को भी परास्त करेगा और गर्भाधान का दुःख भी तुम को प्राप्त न होगा तब सौ वर्ष पूरे होने के पश्चात् महात्मा राजा युवनाश्व की बांई कोख फटी और सूर्य्य के समान एक पुत्र उत्पन्न हुआ परन्तु राजा युवनाश्व मरे नहीं यह एक अद्भुत कर्म हुआ। बन पर्व अ० १२६ ॥

वामपार्श्वं विनिर्भिद्य सुतः सूर्य इवस्थितः।
निश्चक्राम महातेजा न च तं मृत्युराविशत् ॥२७॥

तब महा तेजस्वी इन्द्र उस पुत्र को देखने के वास्ते आये इन्द्र से देवताओं ने कहा कि कौन पालेगा उसने अपनी छनअंगुली उस बालक के मुख में दे दी और कहा कि मैं इसको पालूंगा तब ही इन्द्रादि देवताओं ने उस बालक का नाम मानधाता रक्खा इंद्र की छनअंगुली को पीकर वह बालक बढ़ने लगा।

पंडित जी ! अभी तक मथने अथवा मनुष्य वीर्य्य से अद्भुत २ उत्पत्ति आपको सुनाई अब आपने मंत्रों से पढ़े जल के पीने से राजा की कोख से पुत्र उत्पत्ति सुनी अब और क्या सुनावें। राजा के दूध के स्थान नहीं जसे उसके लिये इन्द्र की अंगुली ने काम दिया। सामान्य रीति से सन्तान १० वा ११ व १२ महीने में उत्पन्न होती है परन्तु राजा के पेट में १०० वर्ष गर्भ रहा देखिये श्रीमान् यह पुराणों के चमत्कार हैं ?

चर्बी के यज्ञ की गन्ध से पुत्रोत्पत्ति ।

सोमक नाम राजा था उसके १०० स्वरूपवती स्त्री थीं जिसने पुत्र उत्पन्न करने के लिये बड़े यत्न किये पर कोई पुत्र न हुआ जब राजा बड़ा हुआ तब जन्तु नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ माताओं ने उसको लेकर पिछवाड़े फेंक दिया जब उस जन्तुको चिंटियोंने काटा तो उसने भयानक शब्द किया तब सब माताओं ने बहुत दुःखी होकर जन्तु को रोने से रोका परन्तु वह न रुका और उसके रोने के शब्द को राजा ने सुन मंत्रियों समेत उठ कर पिछवाड़े गया वहां से पुत्र को लेकर रणवास में आया और कहा कि एक पुत्र वाले को सदा संदेह रहता है इस लिये उसको धिक्कार है एक पुत्र का होना अच्छा नहीं मैंने पुत्र की इच्छा से सौ स्त्रियां कीं उसमें से किसी एक के केवल यही जन्तु नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ है सो भी उत्तम नहीं इससे अधिक और मुझको क्या दुःख होगा इसके उपरान्त मेरी और मेरी स्त्रियों की अवस्था व्यतीत हो गई इस लिये हम सबके प्राण इसी में धरे रहते हैं यदि कोई ऐसा उपाय कठिन भी हो जिससे सौ पुत्र उत्पन्न हो जावें तो भी मैं करूंगा । ऋत्विक् ने कहा ऐसा कर्म्म है परन्तु आप जब कर सकें तब राजा ने कहा चाहे मेरे करने योग्य हो चाहे अयोग्य तो भी मैं सौ पुत्रों की चाहना के लिये करने को उद्यत हूं ऋत्विक् ने कहा कि आप जन्तु से यज्ञ कीजिये तो आप के सौ पुत्र होंगे जब चर्बी का होम किया जायगा तब उसके धुएं को सूंघ के तुम्हारी सब स्त्रियों के पुत्र ही उत्पन्न होंगे तथा उसी स्त्री के जिसका यह अब पुत्र है उसी के फिर उत्पन्न होगा और उसी की कोख में सोने का एक चिन्ह रहेगा । पुनः—

[illegible] तु [illegible] पुनरात्मजः ।
उत्त[illegible] चास्य सौवर्णं लक्ष्मपार्श्वे भविष्यति ॥२१॥

राजा ने पुत्र की इच्छा से सोमिक यज्ञ आरम्भ कर जन्तु को मारना चाहा तब उसकी माता ने हाहाकार मचाया तो भी ऋत्विक् ने बल से उसको छीन उसकी चर्बी से हवन किया स्त्रियों के गर्भ रहा । अ० १२८॥

[illegible] गर्भानल [illegible] परमाद्भुताः ॥६॥

दसवें महीने में राजा सोमक के एक सौ पुत्र उत्पन्न हुए उनमें जन्तु सब से बड़ा हुआ सब माताओं को जैसा जन्तु प्यारा था वैसा कोई पुत्र नही उसकी कोख में सुवर्ण का चिन्ह भी था और वही सब में अधिक गुणवान था।

वन पर्व अ० १२७ ॥

नोट—श्री पं०जी कहां तो वेदों की यह आज्ञा कि "मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षामहे॰" अन्यत्र इसी के अनुयायी महर्षिगणों का यह उपदेश है कि "अहिंसा परमोधर्मः" और कहाँ यज्ञ जैसे पवित्र कर्म्म में यह घोरहत्या तथा बालक की चर्बी का हवन ?

सज्जनों विचारो तो सही कि वास्तविक आपके पुरुषा ऐसे ही निर्दयी एवं अपवित्र कर्म्मों के कर्ता थे यदि नहीं तो इस दुराग्रह को आप क्यों नहीं छोड़ कर एक मुख ही कह देते हो कि यह वाममार्गियों की कपोल कल्पना है न कि ऋषि मुनियों की पदार्थ विज्ञानी एवं भिषग्वर इस बात पर विचार करें कि चर्बी के जलाने से क्या गर्भस्थिति हो सकती है ऐसी ही बातों ने तो सनातन धर्म्म गौरव इतर देशनिवासियों की दृष्टि में घटा दिया परन्तु शोक है कि फिर भी सनातनी भाई एक स्वर होकर यह नहीं कहते कि यह पुराण व्यास ऋषिकृत नहीं हैं।

अष्टावक्र का गर्भ के भीतर बोलना और पिता के शाप से आठ जगह टेढ़ा होना।

उद्दालक नाम ऋषि के कहोड़ नामी एक शिष्य थे वह गुरु की बहुत सेवा करते थे और उनके ही घर में रहते थे इस कारण बहुत दिन पढ़ते रहे जब उद्दालक ने कहोड़ को अपना भक्त जाना तो अपनी पुत्री का विवाह कहोड़ के साथ कर दिया तदनन्तर कहोड़ की स्त्री को गर्भ रहा एक दिन उस बालक ने गर्भ ही में से अपने पिता से कहा कि हे पिता तुम समस्त रात्रि पढ़ते ही रहते हो सो वह कर्म्म उचित नहीं। वन पर्व अ० १३ ॥

सर्वाङ्ग रात्रि मध्ययन करोपि नेदं—
पितः सम्यगिवोपवर्त्तते ॥ ६ ॥

शिष्यों के मध्य में महर्षि कहोड़ ने अपनी निन्दा सुन क्रोधित होकर कहा कि जो तू गर्भ के भीतर ही से बोलता है इस लिये तू आठ जगह से टेढ़ा होगा अन्त में ऐसा ही हुआ और टेढ़े होने के कारण उनका नाम अष्टावक्र हुआ।

नोट—पंडित जी श्रीकृष्ण महाराज ने गीता में कहा है कि "अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्" अर्थात् प्राणियों को अपने किये हुए कर्मों के अनुसार फल मिलता है जैसा कि बाबा तुलसीदास जी ने भी कहा है कि:-

कर्म प्रधान विश्व कर राखा। जो जस कीन तैस फल चाखा॥

अब बताइये बच्चे ने कर्म ही क्या किया यदि कहो कि उसने पेट में से कहा कि सम्पूर्ण रात पढ़ना ठीक नहीं, प्रथम तो गर्भ में बोलना ही ठीक नहीं और यदि बोला और उपरोक्त बात कही तो क्या पाप किया जिस पर पिताने ऐसा शाप दिया कि तू आठ जगह से टेढ़ा होगा महाराज बिना अपराध के ऐसा कठोर दण्ड क्या यही महात्मापन का कार्य्य है?
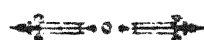
एक मत्स्य का बढ़ना और प्रलय के समय नाव का रोकना।

सूर्य के पुत्र [illegible] और प्रजापति के समान तेजस्वी मनु हुए जिन्होंने बदरिका आश्रम में जाकर ऊर्द्धबाहु तथा एक चरण से खड़े होकर दस सहस्र वर्ष जिह्वा, शिर और नेत्रों को स्थिर करके घोर तप किया एक दिन भीगे वस्त्र जटाधारी मनु के पास जाकर एक मत्स्य बोला कि भगवन् मैं बहुत छोटा हूं इससे मुझको बड़े मत्स्यों से बड़ा डर लगता है आप उनसे हमारी रक्षा करो मैं भी आप को इस प्रकार बदला दूंगा यह सुन दया से उसको पकड़ लिया फिर उसको एक पात्र में छोड़ दिया और पुत्र के समान उसका पालन करने लगे जब वह बहुत बड़ा हो गया तो वह बोला कि भगवन् मेरे लिये कोई दूसरा स्थान बतलाइये तब उन्होंने उस बरतन से निकाल कर बावड़ी में डाल दिया बहुत वर्ष बीतने पर जब वह उसमें भी न समाया तो आठ कोस लम्बी चौड़ी गंगा में डाल दिया जब वह उसमें भी रुदने लगा तब मुनि से कहा कि मैं

चल फिर नहीं सकता इस लिये आप प्रसन्न होकर समुद्र में डाल दीजिये पुनः वह हँसकर बोला कि आपने मेरी बड़ी रक्षा की है इस लिये मैं कहता हूँ कि थोड़े ही काल में इस सब चर और अचर जगत् की प्रलय होगी यह समय सब लोगों के नष्ट होने का आया है इस लिये हम आपको हित की बात सुनाते हैं कि आप एक नाव बनाइये और उसमें दृढ़ रस्सी बाँधिये जब प्रलय का समय आवेगा तब आप सप्त ऋषियों के सहित उसी नाव में चढ़ियेगा और उसी नाव में सब जगत् के वस्तुओं के बीजों का रक्षा पूर्वक क्रम से रख लीजियेगा। हे मुनि जन! आप उस नाव में बैठ हमारा मार्ग देखना तब हम आवेंगे आप हमारे सिर पर सींग देखकर हमको पहचान लेना अब हम जाते हैं आप बिना मेरी सहायता के उस घोर जल को तैर नहीं सकते आप मेरे वचन में शंका मत कीजिये मत्स्य के वचन सुन मनु ने कहा कि हम ऐसा ही करेंगे अनन्तर वे दोनों परस्पर आज्ञा लेकर इच्छानुसार चले गये उसके पश्चात् महाराज मनु ने उसके कथनानुसार सब जगत् की वस्तुओं का इकट्ठा किया फिर एक सुन्दर नाव में बैठ कर घोर तरङ्ग वाले हिमालय के शिखर से बांध दिया फिर उस मत्स्य ने कहा कि हे ऋषियों मुनि लोग हमको ही प्रजापति कहते हैं हमारा नाम ब्रह्मा है हमने मत्स्य रूप धारण कर इस आपत्ति से आपको छुड़ाया है।

वन पर्व अ० १८७ ॥

नोट—श्रीमान्! इस कथा की और बातों को छोड़ कर प्रलय की ओर आप ध्यान दीजिये कि जब स्थावर जगत की प्रलय हुई तो रस्सी, नौका, जड़ वस्तु और सप्त ऋषि मछली शरीरधारी यह किस प्रकार शेष रह सकते हैं यदि रहे तो प्रलय कैसी ?

विश्वामित्र का चुराकर कुत्ते का मांस पकाना।

वीर्य्यशाली विश्वामित्र ने तपस्या के प्रभाव से महात्मा वशिष्ठ के एक सौ पुत्रों का नाश किया था उनके शरीर में क्रोध उत्पन्न होने पर उन्होंने बहुतेरे महा तेजस्वी यातुधान राक्षसों को उत्पन्न किया एक सौ ब्रह्म ऋषियों से युक्त

विद्वान अत्यन्त महान् कुशिकवंश इस मनुष्य लोक में ब्राह्मणों के द्वारा स्तुति युक्ति होकर स्थापित हुआ ऋषि के पुत्र महातपस्वी शुनःशेक पशुत्व को प्राप्त होकर महायज्ञ से [illegible] हुए हरिश्चन्द्र ने निज के तेज के सहारे यज्ञ में देवताओं को संतुष्ट कर बुद्धिमान विश्वामित्र पुत्रत्व लाभ किया देवताओं ने विश्वामित्र को देवरात नामक जो पुत्र प्रदान किया उसके ज्येष्ठ तथा राजा होने पर भी उनके अन्य पुत्रों ने उसे प्रणाम नहीं किया इसी से उन्होंने उन पंचास पुत्रों को शाप दिया वे सब चाण्डाल हो गये। इक्ष्वाकु का पुत्र त्रिशंकु वसिष्ठ के शाप से चांडाल हो गया इसी से उसके बांधवों ने उसे परित्याग किया अनन्तर उसके दक्षिण दिशा को अवलम्बन करके [illegible] होने पर विश्वामित्र ने स्वर्ग भेजा।

विश्वामित्र की कौशकी नामका देवर्षियों से सेवित एक बहुत बड़ी नदी थी उस कल्याणी पुण्य [illegible] श्रेष्ठ नदी को देवता और ब्रह्मर्षि लोग सदा सेवा करते थे। पञ्च वनवती उत्तम प्रसिद्ध रम्भा नामकी अप्सरा उसकी तपस्या में विघ्न करने से शाप वश से शिला हो गई थी।

इसी ऋषि के शाप के भय से पहिले समय में वसिष्ठ मुनि पत्थरखण्ड के सहित जल में डूबे थे और [illegible] होकर जल से उठे थे तभी से पुण्य सलिलवाली महानदी महात्मा वसिष्ठ के उस ही कर्म से विपाशा नाम से विख्यात हुई।

विश्वामित्र त्रिशंकु के यज्ञ करने में प्रवृत्त हुये तब वसिष्ठ मुनि के पुत्रों ने उन्हें यह कहके शाप दिया कि जब तुम चांडाल के पुरोहित हुये हो तो स्वयं चांडाल हो जाओगे इस ही शाप के सत्य होने के निमित्त किसी [illegible] में विश्वामित्र ने [illegible] से कुत्ते का निकृष्ट मांस चुराकर उसे पकाना आरम्भ किया इतने ही समय में इन्द्र ने बाज पक्षी का रूप धारण कर उस मांस को हरण किया। इस समय विश्वामित्र ने भगवान् इन्द्र की स्तुति की इन्द्र ने प्रसन्न होकर उन्हें शाप से मुक्त कर दिया। अनुशासन पर्व अ० ३ ॥

नोट—श्री पं० जी तथा प्यारे सनातनी भाइयों! क्या वास्तव में अब भी ऐसी कथा पढ़ कर कि विश्वामित्र ने चुराकर खाने के लिये कुत्ते का मांस

पकाया यही कहते रहोगे कि यह व्यास प्रणीत है ? कारण कि जंगली जात को छोड़ जिनको कि आप म्लेच्छ कहते हैं वह भी तो चाहे जैसी आपत्ति में क्यों न हो कुत्ते का मांस खाना स्वीकार न करेंगे न कि आप के ऋषि विश्वामित्र ऐसे घृणित कार्य्य करने के लिये बद्धपरिकर हुये। शोक!!! (१) यह बात इसको भी स्पष्टतया प्रकट करती है कि कर्म से ही जाति होती है न कि केवल जन्म से ? क्यों कि त्रिशंकु चांडाल के पुरोहित बनने के लिये विश्वामित्र भी चांडाल हो गये और फिर उसी जन्म में इन्द्र ने उन्हें फिर शुद्ध कर दिया अब यदि आर्य्य समाज अपने वियोगी भाइयों को प्रायश्चित कर शुद्ध करता है ~~तो~~ हमारे सनातनी भाइयों का यह धर्म है कि उससे द्रोह वा उसके कार्य में विघ्न डालें किन्तु ऐसे उदाहरणों को देख उनको चाहिये कि इस शुद्ध कार्य में सहायक बन वेदोक्त धर्म के अनुयायी बनें।

राजा भंगास्वन का एक [illegible] में स्नान करके स्त्री होना फिर तपस्या करके उसके सौ पुत्रों का होना।

प्राचीन काल में भंगास्वन नाम एक धार्मिक राजा था उससे और इन्द्र से शत्रुता हो गई एक समय राजा मृगया को गया तब इन्द्र ने वही समय उत्तम समझ कर उसे मोहित करना आरम्भ किया राजा इन्द्र के द्वारा मोहित होकर अकेला ही घोड़े पर सवार हो भ्रमण को जाते हुये वहाँ भूख प्यास से पीड़ित होकर दिशा भूल गया तब इधर उधर फिर कर घोड़ा एक वृक्ष से बांध दिया और फिर जल में स्वयम् स्नान करने लगा स्नान करते ही राजा स्त्री हो गया।

अथ पीतोदकं सोऽश्वं वृक्षे बद्ध्वा नृपोत्तमः।
अवगाह्य ततस्तात तत्र स्त्रीत्वमुपगतः ॥१०॥

राजा अपने स्त्री रूप को देख कर बहुत व्याकुल हुआ कि क्यों कर नगर को जाऊं और अपने एक सौ पुत्रों का सुख कैसे भोगूंगा न जाने मैं क्योंकर ग्लानि को प्राप्त हुआ इस भांति नाना प्रकार के सोच विचार कर अंत को घोड़े पर चढ़ नगर में आ पुत्रों से अपने ग्लानि का सब वृतान्त सुना, कहा कि तुम

सदैव प्रेम से राज्य करो मैं वन को जाता हूँ ऐसा कह वन को चला गया वहां पर एक तपस्वी के आश्रम के समीप तपस्या करने लगा जिसके गर्भद्वारा एक सौ पुत्र उत्पन्न हुये।

[illegible] ।
अथ सौदायनान् सर्वान् पूर्व पुत्रानभाषयत् ॥२३॥
[illegible] स्त्रीत्वे मम शतंसुताः ।२४॥

अन्त को सौ पुत्रों को लेकर अपने राज्य में गया और प्रथम के पुत्रों से कहा तुम मेरे पुरुष अवस्था के पुत्र हो और यह मेरे स्त्रीत्व प्राप्त होने के सौ पुत्र हैं इस लिये तुम प्रेम से रह कर राज्य भोग करो। [illegible]

पंडित जी वा अन्य महाशयों—ने कहा कि सेठ जी बस कीजिये हम सब इस विषय में इतना सुन तृप्त हो गये कल से और किसी विषय को सुनाइये।

सेठ जी—ने कहा बहुत अच्छा ओ३म्।

पं० जी वा अन्य सब महाशय यथा योग्य के पश्चात् चले गये।

॥ इति अष्टादश परिच्छेद ॥

—:०:—

अथ एकोनविंशति परिच्छेद।

सेठ जी—ने श्री० पंडित जी को वा अन्य महाशयों को आते देख नम्रता पूर्वक नमस्ते कर कहा कि आइये विराजिये।

पं०जी—[illegible] तथा अन्य महाशय यथा योग्य कह विराजमान हुए।

सेठ जी—ने कहा कि श्रीमहाराज, आज मैं आप को आप की आज्ञानुसार पुराणों से गणेश उत्पत्ति सुनाता हूँ. देखिये—

गणेश उत्पत्ति।

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ३२ और ३३ से

शिवजी महाराज पार्वती जी के साथ विवाह करने पीछे कैलाश पर्वत पर

निवास करने लगे । कुछ काल के पश्चात् जया और विजया सखी पार्वती के साथ विचार करने लगीं कि शिवजी के पास असंख्य गण हैं जो उन की आज्ञा पाकर द्वार पर रहते हैं। हमारे कोई भी गण नहीं यद्यपि महादेव के गण हमारे ही गण हैं तो भी हमारा मन उन से नहीं मिलता । सखियों की यह बात सुन पार्वती जी विचार करने लगीं । एक समय पार्वती जी नग्न स्नान कर रहीं थीं नन्दी द्वार पर स्थित थे । शिवजी उस के निषध करने पर भी भीतर चले गये तब पार्वती लज्जित हो स्नान से उठ बैठीं फिर सखी की बात विचार हाथ में जल लेकर अपने शरीर से मैल उतार सब अवयवों सहित सुन्दर पुत्र को निर्माण कर द्वार पर बिठला दिया और कह दिया कि कोई भीतर न आने पावे ।

प्रतिष्ठाप्य तद्द्वारिनिवार्यो इहागमेत् ॥ १९ ॥

फिर दूसरी वार पार्वती जी सखियों सहित स्नान करने को बैठीं उसी समय महादेव जी गणों सहित पधारे और भीतर जाने लगे उस समय गणेश जी ने मना किया कि माता जी स्नान करती हैं और लकड़ी उठाई तब शिवजी ने कहा कि मैं गिरिजापति हूं—और भीतर चलने लगे गणेश जी ने लकड़ी उठाकर ताड़न किया उस समय शिवजी ने क्रोधित होकर गणों को आज्ञा दी और आपस में संग्राम और बड़ा युद्ध हुआ इतने में ब्रह्मा जी गये तब गणेश जी ने उन की डाढ़ी मूंछ उखाड़ लीं तब शिव जी को क्रोध आया और उन की आज्ञा से अनेको भूत प्रेत [illegible] आगये इधर पार्वती ने अपने गणों के निमित्त दो शक्ति उत्पन्न कीं जिन के साथ बड़ा संग्राम हुआ अन्त को शिवजी ने गणेश का शिर त्रिशूल से अलग कर दिया ।

एतदंतरमाम्नाय शूलपाणिस्तथोत्तरे ।
आगत्य च त्रिशूलेन [illegible]पातयत् ॥

जिस को सुन पार्वती ने हज़ारों शक्तियां उत्पन्न कर दीं जो संहार करने लगीं तब नारद आदि सब देवता महादेव जी सहित पार्वती जी के मन्दिर में गये और अनेक प्रकार से विनय की तब उन्होंने कहा कि यदि मेरा पुत्र जी जावे और पूजनीय हो जावे तो सब को आराम हो सकता है वरन् नहीं तब

शिवजी ने शिर को तलाश कराया परन्तु जब वह नहीं मिला तब शिव जी ने कहा कि हे देवताओ ! उत्तर की ओर जाओ उधर से जो प्रथम आता हुआ मिले उसी का शिर लाकर इस के शरीर में लगा दो । वह चले गये प्रथम उन को एक दाँत का हाथी मिला वे उस का शरीर छेदन करके लाये और उन के गले पर अर्थात् शरीर पर लगाया तो शिव, विष्णु और ब्रह्मा जी ने कहा कि जिस महात्मा के तेज से हम सम्पूर्ण उत्पन्न हुए हैं वही तेज आकर प्राप्त हो । इतना कहते ही वह सुन्दर अङ्गयुक्त बालक उठ बैठा ।

अ० ३३ । ६९ ॥

इत्येवमभिमंत्रे [illegible] च यदापुनः ॥३९॥
तदोत्तस्थौ [illegible] सुन्दरस्तदा ॥४०॥

तब इन गजानन का सब देवताओं ने अभिषेक किया ।

[illegible] ॥४०॥

वामन पुराण अ० ५४ से

पर्वत पर महादेव जी पार्वती के साथ आनन्द पूर्वक रहते थे एक दिन पार्वती से महादेव जी ने काली कहा यह सुन वह हिमालय पर्वत पर तप करने चली गई और सौ वर्ष व्यतीत होने पर ब्रह्मा जी वहां गये और कहा कि तेरे तप से मैं प्रसन्न हूँ तेरे सब पाप कट गये अब इच्छा पूर्वक तुम वर मांगो तब पार्वती ने कहा कि मेरा शरीर सुवर्ण के समान हो जावे ब्रह्मा जी यही वर देकर चले गये और पार्वती [illegible] पर्वत पर आकर महादेव जी के साथ रहने लगी । महादेवजी भी हज़ार वर्ष तक महामोह में उनके साथ लिप्त हो गये तब सब देवता इन्द्र और अग्नि को साथ लेकर वहां गये तब अग्नि हंस का रूप धर वहां पहुंचे जहां महादेव आनन्द कर रहे थे यह तुरन्त पार्वती को त्याग बाहर आये सब देवताओं ने प्रणाम किया फिर महादेवजी ने कहा कि कहो तब

सद ने कहा कि यदि आप देवताओं से प्रसन्न हैं और वर देना चाहते हो तो प्रथम आप इस महादुष्कर्म को त्याग दीजे तब महादेवजी ने कहा कि मैं आपकी बात मानने के लिये तैयार हूँ पर मेरे तेज को कौन देवता धारण करेगा उस समय अग्नि ने कहा कि मैं तब उन्होंने वीर्य्य को छोड़ा उसको अग्नि ने पान कर लिया फिर महादेवजी मंदिर में गये और पार्वतीजी से कहा कि देवतादिक तेरे पुत्र का नहीं चाहते इस पर पार्वतीने सबको शाप दिया फिर शौचशाला में स्नान की इच्छा करने पर मालिनी सुगन्धित द्रव्यको ले उनको सुवर्ण मय शरीर पर लगाने लगी उससे जो मल उतरा उससे मालिनी के चले जाने पर पार्वती ने हस्ती के मुख के समान मुख वाला, चार भुजाओं, पुष्ट छाती और सुन्दर लक्षणों से युक्त पुरुष को रचा ।

तस्यांगतायां शैलेयीमलाच्चक्रे गजाननम् ॥५९॥
चतुर्भुजंपीनवक्षः पुरुषं लक्षणान्वितम् ॥६०॥

फिर उस बालक को बना पृथ्वी पर छोड़ आप सुन्दर आसन पर स्थित हुईं और मालनी आकर पार्वतीके सिरको धोने लगी और हंसी जिसको पार्वती जी ने देखकर कहा कि तू क्यों हंसती है इस पर मालनी ने कहा कि निश्चय तुम्हारे पुत्र होगा इस लिये हंसी आती है यह सुन पार्वती जी विधान से स्नान करने लगीं फिर स्नान कर महादेवजी की पूजा कर गृहको गईं फिर महादेवजी भी स्नान करने लगे उस समय आसन के नीचे पार्वतीजी का रचा हुआ मल पुरुष वहीं स्थित रहा और महादेवजी के शरीर का पसीना और विभूति सहित पानी जो पड़ा तिसके मेल से प्रथम सूंड के द्वारा फूतकार पुरुष उपस्थित हुआ ।

तत्संपर्कात् समुत्तस्थौ फूतकृत्यकरमुत्तमम् ।
अपत्यंहिविदित्वा च प्रीतिमान्भुवनेश्वरः ॥६१॥

जिस को अपनी सन्तान जान कर प्रसन्नता पूर्वक ग्रहण कर पार्वती के समीप जाकर कहने लगे कि हे प्रिये प्रियगुणों से युक्त अपने पुत्र को देख । यह सुन पार्वती ने वहां आकर अद्भुत रूप वाले पुत्र को अर्थात् जो पार्वतीजी ने अपने मलका गजमुख पुरुष बनाया था वही देखा और प्रसन्न होकर पुत्र से

मिलीं तदनन्तर पुत्र के मस्तक को सूंघ महादेव पार्वती से कहने लगे कि हे देवि यह पुत्र नायक के विना उत्पन्न हुआ है इस वास्ते इनका नाम विनायक होगा।

नायकेन विना देविमयाभूतोपि पुत्रकः ॥७२॥
यस्माज्जातस्तो नाम्ना भविष्यति विनायकः

लिंग पुराण अ० १०५ मे गणेशोत्पत्ति।

एक बार देवता लोग यह विचार कर कि दैत्य लोग महादेवजी वा ब्रह्मा जी को प्रसन्न कर मन माना वर ले लेते हैं और सदा हमारा पराजय करते हैं इस कारण शिवजी से प्रार्थना करें कि दैत्यों के कर्मों में विघ्न और हमारे कर्मों में अविघ्न करने के अर्थ तथा नारियों को पुत्र देने के लिये और मनुष्यों के सब कामकों सिद्ध होने के अर्थ गणपति को उत्पन्न करें यह मन में ठान सब देवता शिवजी के निकट जा स्तुति करने लगे उस स्तुति को सुन शिवजी ने देवताओं को दर्शन दिये जिससे सब देवता प्रसन्न हुए और बार २ प्रणाम करने लगे तब शिवजी ने कहा कि अभीष्ट वर मांगो हम प्रसन्न हैं उस समय सब देवताओं की ओर से बृहस्पति जी ने कहा कि सब देवताओं के शत्रु दैत्य निर्विघ्न आप का आराधन करते हैं और आप भी शीघ्र उन पर प्रसन्न हो जाते हैं, अब सब देवताओं की यह प्रार्थना है कि उनके कर्मों में विघ्न हुआ करें यह वर मिले इस प्रार्थना को सुन शिवजी ने पार्वती के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न किया जिनका मुख हाथी का सा था हाथों में त्रिशूल पाश धारण किये थे उनके जन्म होते ही पुष्प वृष्टि हुई।

ततस्तद्वः निशम्य वै पिनाकधृक् सुरेश्वरः।
गणेश्वरं सुरेश्वरं वपुर्दधारस्मः शिवः॥ ७॥

और गण गणेशजी के चरणों में प्रणाम करने लगे गजानन भी अपने माता पिता के आगे आनन्द से नृत्य करने लगे। जिसके संस्कार शिवजी ने किये और गोद में ले मस्तक सूंघा और कहा कि हे पुत्र दैत्यों के नाश के लिये देवता ब्राह्मण

और ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मणों के उपकार के लिये तुम्हारा अवतार हुआ है भूमि पर जो दक्षिणाहीन यज्ञ करें उसके धर्म में तुम विघ्न करो जो अन्याय से अध्ययन अध्यापन आदि कर्म करे उसके प्राण हरो तुम्हारा पूजन बिना श्रौतस्मार्त्त जो कार्य करेंगे उनका भी अमंगल ही होगा तुम्हारी पूजा बिना किये देवताओं के भी कार्य सिद्ध न होंगे हम विष्णु और इन्द्र भी जो कार्य आरम्भ में तुम्हारा पूजन न करें तो विघ्न करो।

गणेश उपपुराण अध्याय ७८ से ८१ तक।

सिन्धू नाम एक दैत्य राजा हुआ उसने अनेकान राजाओं को मारा जिस से बहुधा उसके सेवक हो गये वेदोक्त कर्मों के बन्द हो जाने से हाहाकार मचाया सब देवता और मुनि नम्रपणि कर विनायक जी की स्तुति करने लगे स्तुति करते हुये उन ऋषियों के आगे तेज समूह आया जिसको देख सब देवादि विस्मित हुये पुनः वह तेज समूह सौम्य तेजस्वी मूर्तिवाला हो गया तब सब ने नमस्कार किया देवजी ने ऋषि आदिकों से कहा कि उस दैत्य के मारने के लिये हमारा गिरिजा के घर अवतार होगा और हम तुम्हारा वाञ्छित मनोरथ शीघ्र पूरा करेंगे यह कह विनायक जी अन्तर्ध्यान होगये एक दिन महादेव जी को तप करते हुये देख पार्वतीने कहा कि हे देव आप से बढ़कर और कौन है जिस का आप ध्यान करते हैं उन्होंने कहा कि [illegible] जी का। तब पार्वतीने कहा कि मुझको उनकी कैसे प्राप्ति हो महादेवजी ने एकाक्षर मंत्र जपने को कहा पार्वतीजी ने इसको स्वीकार कर जपने का प्रारम्भ कर दिया और बारह वर्ष तक निरन्तर जपा जिससे प्रसन्न हो मुकुट कुण्डल धारे दशभुज त्रिशूल धारी गणेशजी उनके आगे आये और कहा हम तुम से प्रसन्न हैं वर मांगो पार्वती ने कहा कि तुम मेरे पुत्र हो यह सुन गणेशजी ने कहा अच्छा हम तुम्हारे यहां जन्म लेंगे यह कह अन्तर्ध्यान हो गये तदनन्तर गणेशजी की प्राप्ति के लिये व्रतकर सब सामिग्री द्वारा गजानन की मूर्ति बना गौरीजी ने उसकी बहुत प्रकार से पूजा की तब तो वह मूर्ति चैतन्य हो गई जिसके तेज से गौरीजी मूर्छित हो गईं थोड़ी देर के पश्चात् सावधान हो पार्वती ने कहा कि मुझसे पूजा में क्या बिगाड़ हो गया तब वह तेज सौम्यमूर्त्ति बालक हो गया पार्वती के पूछने पर

फिर भला आप ही बतलाइये कि मर गये वह उत्पन्न हो गये तो फिर आप श्राद्ध किसका करते हैं ? पण्डितजी जीव अनादि है, जो अपने २ कर्म्मानुसार जन्म मरण को धारण करता है और जिस भांति मनुष्य पुराने वस्त्रों को उतार नये वस्त्र धारण कर लेता है उसी प्रकार जीव एक शरीर को छोड़ दूसरे शरीर में प्रवेश करता है जैसा कि श्रीमद्भागवत स्कंद १० पूर्वार्द्ध अध्याय १ में लिखा है।

देहे पंचत्वमापन्ने देही कर्मानुगोऽवशः ।
देहांतरमनुप्राप्य प्राक्तनंत्यजते वपुः ॥३९॥

जब देही का अन्त आता है उस समय जीवात्मा कर्मानुकूल परवश हो दूसरे देह को प्राप्त हो अपने पूर्व देह को त्याग करता है इसके अतिरिक्त जिस प्रकार मनुष्य चलते समय अगले पैर को उठा फिर पिछले पैर को उठाता है जैसे जोंक। उसी भांति शरीरस्थ जीवात्मा कर्मानुकूल अपने शरीर को छोड़ दूसरे शरीर को ग्रहण करता है जैसा कि—

व्रजंस्तिष्ठन्पदैकेन यथैवैकेन गच्छति ।
तथा तृण जलूकैवं देही कर्म गतिंगतः ॥४०॥

इसके पश्चात् पुराणों में इस प्रकार के अनेक लेख उपस्थित हैं गीता, महाभारत भी पुकार २ कर कह रहे हैं फिर आप मृतकश्राद्ध को क्योंकर मानते हैं जब कि प्रत्येक पुरुष अपने कर्म्मों का फल पाता है न कि पुत्रादि के कर्म्मों का ? यदि मृतकश्राद्ध ही ठीक है तो जिस पर धन है वह उसको व्यय कर अपने पितादि को स्वर्ग पहुंचा सकता है तो फिर उस प्राणी के पाप पुण्य का कोई ठीक नहीं। यथार्थ में वहां भी घूंस काम देती है, पण्डितजी यह सब लड़कों के खेल हैं, जिन्होंने भारत वासियों को चक्कर में डाल अपना खूब प्रयोजन निकाला है, श्रीमान्! यदि आप उन वेदमंत्रों के अर्थों को विचार करें जो पण्डितजन, श्राद्ध समय पढ़ते हैं तो प्रत्यक्ष प्रकट हो जावेगा कि उनके वह अर्थ नहीं जैसा कि पौराणिक जन सुनाते हैं प्रथम आप सत्य अर्थों का श्रवण कर लीजिये।

पितृ शब्द निघण्टु ४ । १ में पिता पद आया है। पिता बहुवचन ही पितरः है। निरुक्त ४ । २१ में पिता पद के व्याख्यान में नीचे लिखा मन्त्र ऋग्वेद १ । १६४ । ३३ का प्रमाण दिया है कि:—

द्यौर्मे पिता जनिता नाभिरत्र । इत्यादि ।

फिर निरुक्तकार इसके अर्थ करते हुवे पिता पद का अर्थ इस प्रकार करते हैं कि:—

पिता पाता वा पालयिता वा ॥

अर्थात् पिता पालने वा रक्षा करने से कहा जाता है। (द्यौर्मे पिता) मंत्र में पिता शब्द सूर्य का वाचक है और ऐसा ही स्वामी जी ऋग्वेद भाष्य में लिखते हैं तात्पर्य्य यह है कि रक्षा वा पालने वाले जनकादि मनुष्यवर्ग राजा, सूर्य्य, चन्द्र, किरण वायुभेद जिनका राजा यम कहाता है, इत्यादि रक्षकों और पालन करने वालों का नाम पितर है वेदों में बहुत स्थानों में यमको पितरों का राजा लिखा है। जैसे मनुष्यों का राजा मनुष्य, मृगों का राजा मृगराजसिंह, औषधियों का राजा सोम नामक औषधि, ऋतुओं का राजा ऋतुराज वसन्त है इसी प्रकार वायुभेद जो हमारे रक्षक और पालक हैं उनका भी राजा यम वायु ही है जैसा कि:—

माध्यमिको यम इत्याहुर्नैरुक्ताः तस्मात्पितॄन्माध्य-

मिकान्मन्यन्ते स हि तेषां राजेति ॥

पितरः पद निघण्टु ५ । ५ में और उसकी व्याख्या निरुक्त ११ । १९ में है।

अर्थात् यम मध्यस्थान देवता है यह नैरुक्तों का मत है, इस लिये पितरों को भी मध्यस्थान देवता मानते हैं क्योंकि वह (यम) उन पितरों का राजा है। फिर निरुक्त ७ । ५

वायुर्वेन्द्रोवान्तरिक्षस्थानः ॥

वायु अन्तरिक्ष स्थान अर्थात् मध्य स्थान देवता है। ऐसा ही ऋग्वेद १० । १४ । १३ में:—

यमं हि यज्ञो गच्छत्यग्निदूतः ।

अग्नि जिस का दूत ले जाना वाला है वह यज्ञ वायु को प्राप्त है। यहां भी यम का अर्थ वायु विशेष है। और यजुः ८। ५७

यमः सूयमानो विष्णुः संभ्रियमाणो वायुः पूयमानः।

यहाँ भी यम नाम वायु विशेष का है।

स्तुहीन्द्रं व्यश्ववदनूर्मिं वजिनं यमम् ऋ० ८। २४। २२

यहां भी यम नाम वायु विशेष का है क्योंकि इस मन्त्र का देवता इन्द्र है और इन्द्र ऊपर लिखे निरुक्त ७। ५

वायुर्वा इन्द्रो वा अन्तरिक्षस्थानः।

के अनुसार वायु का भी नाम है।

इस के अतिरिक्त यह भी वेद की शिक्षा है कि प्रत्येक लिङ्ग शरीरी जीवात्मा स्थूल शरीर छोड़कर आकाश में १२ दिन तक १२ आकाशी पदार्थों से आप्यायित (डिवेलप) होता है तब इसे किसी लोक में कर्मानुसार जन्म मिलता है। हां, जिन का लिंग शरीर भी छूट जाता है उन मुक्त पुरुषों की यह अवस्था नहीं है।

सविता प्रथमेहन्नग्निर्द्वितीये वायुस्तृतीय आदित्यश्चतुर्थे चन्द्रमाः पञ्चम ऋतुः षष्टे मरुतः सप्तम बृहस्पतिरष्टमे मित्रो नवमे वरुणो दशम इन्द्र एकादशे विश्वे देवा द्वादशे ॥

(यजुः ३९। ६) श्रीमद्दयानन्द सरस्वती भाष्यम्—

हे मनुष्यो! इस जीव को [प्रथमे] पहले [अहन] दिन [सविता] सूर्य [द्वितीये] दूसरे दिन [अग्निः] अग्नि, तीसरे वायु चौथे पाँचवें चन्द्रमा छठे वसन्तादि ऋतु, सातवें मरुत्, आठवें सूत्रात्मा, नवें प्राण, दशवें उदान, ग्यारहवें बिजुली और बारहवें दिन सब दिव्य गुण प्राप्त होते हैं। ३९। ६।

बस इस से यह भी जाना जाता है कि सूर्य, अग्नि, वायु, चन्द्र, प्राण, उदान, बिजुली और आकाश गत अन्य सब दिव्य पदार्थों का (जो देवता कहाते हैं) हवन करने से सुधार होता है इसी को तृप्ति और अनुकूलता भी कह सकते हैं। इस से अग्नि में होम द्वारा पृथ्वी अन्तरिक्ष और द्यौलोक इन

तीनों की शुद्धि, वृद्धि और तृप्ति होने से आकाशगत पितरों (वायु विशेषों) का भी उपकार सम्भव है।

श्री० पं० जी ! उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध है कि मृत्यु के पश्चात् जीव कर्मानुसार जन्म ले लेता है फिर श्राद्ध का अन्नादि पदार्थ उन को मिल ही नहीं सकता और जिन्होंने जन्म ले लिया वह आवाहन से भी नहीं आ सकते अतएव मरों का श्राद्ध करना व्यर्थ का आडम्बर ही है वेदों में केवल मृतक शरीरों को यज्ञादि पदार्थों से जला देने की ही आज्ञा है देखिये—

अथर्व काण्ड १८ श्लोक ४९।

ये नः पितुः पितरो ये पिता महा य आविविशुरुर्व १न्तरिक्षम्
य आक्षियन्ति पृथिवीमुत द्यां तेभ्यः पितृभ्यो नमसाविधेम ॥

अर्थ-[ये] जो [नः] हमारे [पितुः पितरः] बाप के बाप हैं, अतएव [ये] जो हमारे [पिता महाः] बाबा हैं [ये] जो कि [उरु अन्तरिक्षम्] इस बड़े आकाश को [आविविशुः] प्रवेश कर गये हैं [ये] जो कि [पृथिवीम्] पृथिवी को [उत] और [द्याम्] आकाश को [आक्षयन्ति] छाय रहे हैं [तेभ्यः] उन [पितृभ्यः] मृत शरीरों के लिये [नमसा विधेम] हम आहुति करते हैं

अर्थात् पुत्रादि का कर्तव्य है कि पिता वा पितामहादि पूर्वजों की अन्त्येष्टि श्रद्धा पूर्वक करें, ऐसा करने से पृथिवी और अन्तरिक्ष लोक में जो मृतपूर्वज लोगों के शरीरावयव वायु आदि में हैं वे बिगड़ते नहीं किन्तु सुधर कर मनुष्यादि प्राणियों को दुःख नहीं देते हैं। अन्यथा वायु जल को विकृत करके रोगादि उत्पन्न करते हैं।

अब कहिये कौन से वेद मंत्र की आज्ञा से मृतक पितरों को श्राद्ध मिलता है। इसके उपरान्त श्राद्ध अर्थात् श्रत् सत्य का नाम है।

श्रत्सत्यंदधाति या क्रिया श्रद्धा-
श्रद्धया यत् क्रियते तच्छ्राद्धम् ॥

जिस क्रिया से सत्य का ग्रहण किया जाय उसको श्रद्धा और जो श्रद्धा से किया जाय उसका नाम श्राद्ध है। और:—

तृप्यन्ति तर्पयन्ति येन पितॄन् तत्तर्पणम् ।

जिस कर्म से तृप्त हो उसको तर्पण कहते हैं यह तृप्ति जीवित माता पिता आदि के साथ श्रद्धा से सेवा करने से होती है न कि मरने पर मरने पर तो जीवात्मा का उनसे कोई सम्बन्ध नहीं रहता, फिर श्राद्ध और तर्पण कैसा ?

पण्डितजी—अब हम आपको मृतकश्राद्ध विषय की असल कार्य्यवाही सुनाते हैं जो पुराणों में लिखी हैं आप अच्छे प्रकार सुन उन पर विचार कीजिये शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ३० में लिखा है ।

किसी समय फलगुनी नदी के किनारे लक्ष्मण सहित रामचन्द्र जी आये और सीता सहित पिता की आज्ञा स्मरण कर वहां स्थित हुए और श्राद्ध का समय जान कहने लगे अब क्या करना चाहिये तब फल लेने के लिये लक्ष्मण को वन भेजा बहुत समय होगया तब स्वयं आप चले जानकी जी अकेली रह गई और उसने विचारा कि श्राद्ध का समय जाता है न मालूम अभी तक क्यों नहीं आये तब इंगुदी के पिण्ड बना कर स्वयम् जानकी जी ने दिये तब दशरथादि पितरों के हाथ निकले ।

किंचिद्धस्तुग्रहीत्वातुतेनैव पिण्डश्चाम्बुदः ।
दत्तायदातया तत्रहस्ताश्चनिः सृतास्तदा ॥११॥

और तृप्त होकर कहने लगे, जनकात्मजे ! तुम धन्य हो जानकी जी ने उनके अनेक प्रकार भूषणधारी हाथों को देख कर कहा तुम कौन हो जानकी जी के यह वचन सुनकर उनके श्वसुर बोले कि हे पतिव्रते मैं तेरा श्वसुर हूँ तुम्हारे पिण्ड दान से मैं तृप्त होगया हूँ तुम्हारा श्राद्ध भी सफल हो गया ।

अहं श्वशुरस्तात भर्त्तुस्तुभ्यंके च सुव्रते ।
तृप्ताः स्मतव पिण्डेनश्राद्धं ते सफलंकृतम् ॥१४॥

ऐसा कहने पर जानकी बोली इस तुम्हारे हाथ निकालने का विश्वास हमारे प्यारे स्वामी न करेंगे, ऐसा कहने पर दशरथ बोले कि हे जानकी ! इस विषय में तुम साक्षी करलो यह सुन फलगुनदी, गौ, अग्नि तथा केतकी से कहा कि तुम इस वार्त्ता को अच्छे प्रकार सुनलो इसमें वे सब साक्षी हुए, तब वे

फल्गु नदी आदि में अन्तर्ध्यान हुए इस अवसर में रामचन्द्र जी आये और जानकीजी से बोले कि हे साध्वि तुम शीघ्र ही पवित्र हो जाओ क्योंकि श्राद्ध का समय आ गया तब जानकी विस्मृत हो कुछ न बोलीं तब राम ने उनको आश्चर्ययुक्त देख जानकी जी से पूछा तिस पर इन्होंने पूर्व का सब वृत्तांत कह सुनाया तब वह अत्यन्त क्रुद्ध हो लक्ष्मण जी से बोले कि तुमने जानकी जी का कहना सुना हमने तो कभी ऐसा नहीं देखा जैसा यह कहती हैं।

[illegible] ॥२३॥

इससे विदित होता है कि यह काम करने के लिये [illegible] करती है तब जानकी जी लज्जित हो कहने लगी मैंने फल्गु नदी, गाय अग्नि और केतुकी इन चार को साक्षी कर लिया है श्रीरामजी ने कहा कि यदि यह चारों साक्षी दे देंगे तो हम तुम्हारे वचनों को सत्य मान लेंगे इतना कह श्रीरामजी ने इन चारों साक्षियों से पूछा तो वह सब मोहित हो कहने लगे कि हम इस विषय को नहीं जानते ॥२६॥

ते [illegible] न जानीमोवयमिदम् ॥२६॥

यह सुन दोनों भाई आराम में होकर कहने लगे कि अब श्राद्ध करना चाहिये दिन बहुत चढ़ आया और श्राद्ध बिना भोजनों के करना चाहिये तब जानकी अत्यन्त दुःख से दुःखी होकर कहने लगी कि यह क्या हुआ और फिर पाक बनाने लगी इधर श्राद्ध समय [illegible] ने पितरों का आवाहन किया तब सूर्य के समीप से वाणी निकली कि हे पुत्र अब तुम क्यों हवन करते हो इसने तो हमको तृप्त कर दिया तब राम ने कहा कि मैं ऐसे कभी न मानूंगा फिर सूर्य से वाणी निकली कि पाप रहित किये हुए श्राद्ध को फिर नहीं करना फिर भी राम ने उनके वाक्यों को नहीं माना तब सूर्य साक्षी होकर बोले कि अब तुम क्यों श्राद्ध करते हो तब राम "जय" ऐसा शब्द करके राम लक्ष्मण से बोले हम धन्य हैं जब कि कुलवधू ऐसी श्रेष्ठ है फिर राम लक्ष्मण भोजन कर परस्पर कहने लगे कि इन साक्षियों ने साक्षी क्यों नहीं दी. इसपर सीताजी ने इन चारों को शाप दिया कि हे नदी जो तूने सुना और देखा

तथापि सत्य नहीं कहा इमसे तू पाताल में जाकर बह, केतकी आज से शिव के मस्तक पर चढ़ने योग्य न होगी निकट खड़ी गाय से कहा कि जो तू ने सत्य नहीं कहा इस लिये तू पूंछ से शुद्ध और मुंह से अशुद्ध और अग्नि से कहा कि तू सर्व भक्षी होगी।

पंडितजी—प्रथम तो यह विचारिये कि श्रीराम को सनातनी भाई ईश्वरावतार मानते हैं परन्तु यहां इतनी भी सुध नहीं कि जानकी जी श्राद्ध कर चुकीं। द्वितीय जब जानकीजी ने दशरथ जी के हाथ निकालने की बात कही तो श्रीरामजी ने कहा कि हमने तो कभी ऐसा नहीं देखा, जिस पर सीता जी ने साक्षियों को पेश किया परन्तु किसी ने साक्षी नहीं दी, फिर आप इस कथा से क्या प्रयोजन सिद्ध करते हैं, हमारी समझ में तो [illegible] के कर्त्ता ने श्राद्धमाहात्म्य को बढ़ाने के लिये श्रीराम के नाम से श्राद्ध की कथा को घड़ लिया फिर भी विचारशीलों की दृष्टि में कई दोष दृष्टि आ रहे हैं अब आगे और श्रवण कीजिये।

पद्म पुराण सृष्टि खण्ड अध्याय—

१० में लिखा है कि पूर्व समय में कुरुक्षेत्र के बीच कौशिक नाम एक महात्मा हुए जिनके सात पुत्र थे जो गर्ग ऋषि के शिष्य हुए महात्मा कौशिक के मर जाने पर दैवयोग से बड़ा कठिन दुर्भिक्ष पड़ा वह सब ऋषि के यहां गायें चराया करते थे एक दिन अन्न के न मिलने पर सब भाइयों ने यह कुविचार किया कि अब अन्न नहीं मिलता इस लिये इस कपिला को ही भक्षण कर लें जब सब जनों ने इस बात का विचार किया तो उनमें से छोटा भाई बोला कि यदि इसके मारने का ही विचार है तो श्राद्ध के रूप अर्थात् नाम से बध करो।

[illegible] ॥५३॥

ऐसा करने से मारने का दोष हमको न लगेगा क्योंकि पितृ लोग भी इस को अभक्ष्य समझते हैं।

श्राद्धे नियोज्यमानायां पापं न[illegible]वम् ॥५३॥

सब सब ज्येष्ठ भाइयों ने आज्ञा दी अच्छा श्राद्ध के लिये ही बध करो

ऐसा विचार कर सब से छोटे ने श्राद्ध करने का उद्योग किया सब दो भाइयों को दो और तीन भाइयों को पितृ ब्राह्मण के और एक को अतिथि बनाया अर्थात् सब से छोटा श्राद्ध कर्त्ता हुआ इस प्रकार उन सबने उस कपिला को मन्त्र पूर्वक श्राद्ध विधान से भक्षण कर लिया इसके उपरांत सब हत्यारों ने गुरु से कहा कि कपिला को शेर ने खा लिया बछड़ा आप लीजिये गुरु महाराज ने कुछ विचार किया और जाना कि ऐसा ही हुआ होगा मरने के पीछे यह सब दशार्ण देश में बहेलिये हुए। चूंकि पितरों के भाव से वध किया था इस लिये पूर्व जन्म की जाति का स्मरण बना रहा और व्याध के रूप में पाप न करने से और तीर्थ यात्रा के प्रभाव से मरने पर [illegible] पर्वत पर सब के सब मृग हुए वहां भी विज्ञान रहने से सुकर्म्म करने के कारण मानसरोवर के किनारे पर सातों चक्रवाक हुये फिर इस योनि में वैराग्य रहा जिससे मरने पर ब्राह्मण हुए उसमें भी योगाभ्यासी फिर वह कालान्तर में परमपद को प्राप्त हुए इस लिये ऋषियों ने कहा है कि जब पितर श्राद्ध से सन्तुष्ट होते हैं तो धन विद्या स्वर्ग, मोक्ष, पुत्र, वा राज्य और सब कुछ सुख देते हैं।

पंडितजी—महाराज यदि इस कथा को सत्य माना जाय तो प्रथम यह कठिन मालूम होता है कि वह सातों ऋषि के बेटे और गर्ग ऋषि के शिष्य हों जिनको कभी भी किसी जीव की हिंसा का काम नहीं पड़ा उनके पिता और गुरु दोनों महात्मा थे फिर इन सातों से [गाय] हिंसा का होना आश्चर्यजनक है, हां भूखे थे शायद ऐसा हो गया हो परन्तु इस पर छोटे ने कहा कि श्राद्ध के नाम से मारिये पाप न होगा फिर उन सब ने सम्मति दे दी और श्राद्ध किया जिस के फल से उन सबको जाति स्मरण बना रहा और वह कालांतर में तर गये क्योंकि श्रीमान सनातन धर्मियों की सम्मति से जब पितर बड़े २ कार्य्यों को मृतक श्राद्ध करने से देते हैं तो क्या उनको यह खबर नहीं कि यह गाय भूख के कारण मारा चाहते थे पाप न लगने के कारण श्राद्ध करने के बहाने से मार श्राद्ध किया कहिये श्रीमान बिना मानसी संकल्प होने पर भी पितरों ने उनको श्राद्ध का फल दे ही दिया क्या यह आश्चर्य नहीं है ? पुनः यह अभक्ष्य भोजन था फिर पितरों ने उसको क्यों स्वीकार किया क्या पितर भी ऐसी हिंसा को स्वीकार करते हैं

मांस से श्राद्ध करने की आज्ञा और पितरों की तृप्ति।

मत्स्य अ० १७ में लिखा है कि मत्स्य मांस से दो, हरिण के मांस से तीन, मेढ़े के मांस से चार, पक्षियों के मांस से पांच, बकरे के मांस से छः विन्दुओं वाले हरिण के मांस से सात, एण संज्ञक मृग के मांस से आठ, सूकर और भैंसे के मांस से दस, खरगोश और कछुए के मांस से ११ रौरव नाम के हिरन के मांस से १५ महीने तक, मेंढा और सिंह के मांस से १२ वर्ष तक तथा काल शाक जीव और गेंडे के मांस से अनन्त वर्षों तक पितर लोग तृप्त रहते हैं।

द्वौ मासौ मत्स्यमांसेन त्रीन्मासान्हारिणेनतु ।
औरभ्रेणाथ चतुरः शाकुनेनाथ पञ्चवै ॥२१॥
षण्मासांश्छागमांसेन तृप्यन्तु पितरस्तथा ।
सप्त पार्षत मांसेन तथाष्टावेणजेनतु ॥२२॥
दशमासांस्तु तृप्यन्ति वराहमहिषामिषैः ।
शशकूर्मजमांसेन मासानेकादशैवतु ॥२३॥
रौरवेणाच तृप्यन्ति मांसानि पञ्चदशैवतु ।
व्याघ्र्यासिंहस्य मांसेन तृप्तिर्द्वादशवार्षिकी ।
कालशाकेन चानन्ता खड्गमांसेन चैव हि ॥२५॥

इसी भांति अन्य पुराणों में भी मांस खाने की आज्ञाएं पाई जाती हैं कहिये वेद की वह आज्ञा कि "अहिंसा परमो धर्मः" कहां रही। सच तो यह है कि स्वार्थी पुरुष अपने स्वार्थसिद्धि के सन्मुख किसी दोष को नहीं देखता इसी प्रकार श्राद्ध सिद्धि को समझिये परन्तु इस पर भी श्राद्ध की सिद्धि नहीं होती क्योंकि पौराणिकों का यह खयाल है कि हमारा किया श्राद्धादि जन्मान्तर में हमारे पितरों को पहुंचता है वह भी पद्मपुराण षष्ठ उत्तर खण्ड अध्याय ७७ के लेख से मिथ्या प्रतीत होता है।-अब मैं श्रीमान् को इसकी पुष्टि में और एक

कथा सुनाता हूँ। यह कथा [illegible] ऋषि पञ्चमी व्रतोद्यापन विधि में आई है। जो मुरादाबादीय पं० व्रजरत्न ([illegible]) भट्टाचार्य्य के हिन्दी अनुवाद सहित बम्बई गणपति कृष्णा जी प्रेस में छपी है। हम मूल और उसी का हिन्दी अनुवाद नीचे लिखते हैं।

अत्रार्थे यत्पुरावृत्तं प्रवक्ष्यामि कथानकम्। पुरा कृतयुगे राजा विदर्भायां बभूवह ॥१६॥
श्येनजिन्नाम राजर्षिश्चातुर्वर्ण्यानुपालकः। तस्य देशेऽवसद्विप्रो वेदवेदाङ्ग पारगः ॥१७॥
सुमित्रो नाम राजेन्द्र ? सर्वभूत हिते रतः। कृषिवृत्त्या सदा युक्तः [illegible]
तस्य भार्या सुसाध्वी च [illegible]। [illegible] विख्याता बहुभृत्यसुहृज्जना ॥१६॥
अतिचिन्तान्विता सा च प्रावृट्काले सुमध्यमा। क्षेत्रादिषु रतः साध्वी [illegible] मासता॥
एकदा सात्मनः प्राप्तमृतुकालं व्यलोकयत्। रजस्वलापि सा राजन्! गृहकर्म च कारह॥२१॥
भाण्डादीन्यस्पृशद्राजन्तुनौ प्राप्तेऽपि भामिनी। कालेन बहुधा साध्वी पञ्चत्वमगमत्तदा ॥
तस्या भर्त्तापि विप्रोऽसौ कालधर्म [illegible] एवं तौ दम्पती राजन्! स्वकर्म वशगौतदा
भार्या तस्य जयश्रीः सा अनुस्पर्श दोषतः [illegible] मनुप्राप्ता सुमित्रोऽपि नरेश्वर! ॥२४॥
तस्याः [illegible] दोषेण बलीवर्दो बभूवह। एवं तौ दम्पती राजन्! स्वकर्म वशगो तदा॥२५॥
ऋतु सम्पर्क दोषेण तिर्यग्योनिमुपागतौ, स्वधर्म्माचरणाज्जाता शुभौ जातिस्मरौ तथा॥२६
सुमित्रस्यच पुत्रोऽभूद् गुरुशुश्रूषणे रतः ॥२७॥
सुमतिर्नाम धर्मज्ञो देवता तिथि पूजकः। अथ कस्याहे संप्राप्ते पितुस्तुसुमतिस्तदा ॥२८॥
भार्यां चन्द्रवतीं प्राह सुमतिः श्रद्धयान्वितः, अद्य सांवत्सरदिनं पितुर्मे चारुहासिनि ॥२९॥
भोजनीया द्विजाश्चारु [illegible] ॥३०॥
सुक्त पायसमागत्यैव सर्पेण गरलं ततः। दृष्ट्वा [illegible] शुनी भाण्डानि साऽस्पृशत् ॥
द्विजभार्याच तां दृष्ट्वा उल्मुकेन जघानह, भाण्डादीनि च प्रक्षाल्य त्यक्त्वा पाकंसुमध्यमा॥
पुनः पाकं च कृत्वातु श्राद्धं कृत्वा विधानतः। ततो भुक्तेषु विप्रेषु नोच्छिष्टं च ददौ बहिः॥
भूमौ क्षिप्तं तदाशुन्या [illegible] भवत्, ततो राज्यां [illegible] शुनी [illegible]
बलीवर्दमुपागत्य भर्त्तारं [illegible]। बुभुक्षिताद्य हे भर्त्तर्नदत्तं भोजनं किञ्चन् ॥ ३१ ॥
ग्रासादिकं च न प्राप्तं क्षुधा मां वाधते भृशम्, अन्यस्मिन्दिवसे पुत्रो ममलेह्यं ददात्यसौ
अद्य मह्यं किमप्येष उच्छिष्टमपि नो ददौ, पायसान्ने पपाताद्य गरलं सर्प सम्भवम् ॥३७॥
मया विचिन्त्य मनसा मरिष्यन्ति द्विजोत्तमाः, संस्पृष्टं पायसं गत्वा वध्वाहं [illegible]
दुम्बितं तेन मे गात्रं कटिर्भग्नाकरोमि किम्, ततः प्राह स चानडवान् भद्रे ते पायसंग्रहात्
किं करोमि हराकोऽहं [illegible] मागतः, [illegible] क्षेत्रे वाहितः सकलं दिनम् ॥३७॥

मारितश्चात्मार्जेनाहं मुखं बद्ध्वा बुभुक्षितः, वृथा श्राद्धं कृतं तेन जाताद्य मम कष्टता॥४१ कृष्णउवाच-तयोः संवदतोरेवं मातापित्रोश्च भारत!, श्रुत्वा पुत्रस्तथा वाक्यं यदुक्तच तदोभयोः ॥४२॥ पितरौ तौ विदित्वातु दत्तवान् सुमतिस्तदा। तस्यां रजन्यां तत्कालं-ददौतस्यैव भोजनम् ॥४३॥

भावार्थ—इसी बीच में जो प्राचीन कथा का वृत्तान्त है सो मैं कहता हूँ, पहिले सत्ययुग में विदर्भनगरी में चारों वर्णों को पालने वाले राजाओं में ऋषि के समान एक राजा श्येनजित् हुवे थे, उनके देश में अङ्गों सहित वेदों के अन्त का जानने वाला ॥१६॥१७॥ सम्पूर्ण प्राणियों के हित का करने वाला, खेती के कर्म से कुटम्ब का पालन करने वाला एक सुमित्र नामक ब्राह्मण रहता था ॥१८॥ बड़ी पतिव्रता, पति की सेवा में तत्पर अनेक भृत्य (नौकर) और कुटुम्बियों से युक्त जयश्री नाम वाली उस ब्राह्मण की एक स्त्री थी ॥१९॥ एक समय वर्षाकाल में अत्यन्त चिन्ता से युक्त सुन्दर कमर वाली खेत के काम में लगी हुई उस पतिव्रता का चित्त अत्यन्त व्याकुल हुआ ॥२०॥ एक समय उस स्त्री ने अपने ऋतुकाल को आता देखा और हे राजन ! वह रजस्वला होकर भी घर के काम को करती रही ॥२१॥ हे राजन् ! ऋतुकाल प्राप्त होने पर भी उसने भाण्डादिक सब छुवे और वह स्त्री थोड़े ही समय में मृत्यु को प्राप्त हुई ॥२२॥ और उसका पति भी समयानुसार मृत्यु के वश हुआ। इस प्रकार वे दोनों स्त्री पुरुष अपने कर्मों के वश हुये ॥२३॥ उसकी वह स्त्री जयश्री ऋतु-काल की सङ्गति के दोष से कुतिया की योनि को प्राप्त हुई। और हे राजन्! वह सुमित्र ब्राह्मण भी ॥२४॥ उस स्त्री के संग के दोष से उस समय बलीवर्द्ध (बैल) हुआ। हे राजन् ! तब वे दोनों स्त्री पुरुष इस प्रकार अपने कर्मों के वशीभूत हुवे ॥२५॥ ऋतुकाल की संगति के दोष से वे दोनों पशु योनि को प्राप्त होकर अपने धर्म के प्रताप से अपने पूर्वजन्म को याद करते हुये ॥२६॥ हे राजन ! उसी प्रकार अपने किये हुए पहिले पाप को भी याद करते हुये पुत्र के ही घर उत्पन्न हुये। गुरु की अत्यन्तशुश्रूषा करने वाला, धर्म का जानने वाला, देवता और अभ्यागतों की पूजा करने वाला सुमति नाम सुमित्र का पुत्र था। फिर पिता के क्षयाह के प्राप्त होने पर उस समय वह सुमति ॥२७॥२८॥ श्रद्धा से युक्त होकर अपनी चन्द्रवती स्त्री से बोला कि हे मनोहर हास्य करने

वाली आज मेरे पिता की वर्षी का दिन है ॥२९॥ हे अधिक भय करने वाली! आज ब्राह्मणों को भोजन कराना उचित है, सो तू जाकर पाक (भोजन) तैयार कर। अपने पति सुमति की आज्ञा से उस चन्द्रवती ने सब भोजन बनाये॥३०॥ तदनन्तर खीर के पात्र में सर्प ने विष छोड़ दिया, उसको देखकर ब्राह्मणों के मर जाने के भय से खीर के पात्र को उस कुतिया ने छू दिया॥३१॥ उस पात्र को छूती हुई उस कुतिया को देखकर उस ब्राह्मण की चन्द्रवती स्त्री ने उसे जलती लकड़ी से मारा और उस सुन्दर कमर वाली चन्द्रवती ने भोजन को छोड़ सब बर्तनों को धोकर ॥३२॥ फिर दूसरा पाक बनाकर बड़ी विधि से श्राद्ध करके ब्राह्मणों के जीम जाने पर उसने ज़मीन में पड़ी हुई ब्राह्मणों की जूठन बाहर नहीं फेंकी जिससे वह कुत्ती भूखी ही रही, फिर रात होने पर अत्यन्त क्षुधा (भूख) लगी तब ॥३३॥३४॥ अपने पति (बैल) के पास आकर यह बोली कि हे नाथ! आज मैं बहुत भूखी हूं। किसी ने मुझे भोजनादि कुछ भी नहीं दिया॥३५॥ आज तो एक ग्रास तक भी मैंने नहीं पाया, इस कारण भूख मुझे अधिक बाधती है। अन्य दिन तो यह हमारा पुत्र मुझे भोजन देता था॥३६॥ आज तो इसने मुझे ज़रा झूठन तक भी नहीं दी। आज खीर में सर्प का विष गिर गया था॥३७॥ सो यह बड़े २ श्रेष्ठ ब्राह्मण मर जायेंगे। ऐसा मैंने विचार कर खीर को छू दिया, इस कारण बहू ने मुझे बहुत मारा ॥३८॥ उस मारने से मेरा शरीर बहुत दुःखित हुआ और मेरी कमर भी टूट गई, अब मैं क्या करूं? यह सुनकर वह बलीवर्द बोला कि सुभगे! तेरे पाप के संग्रह से ॥३९॥ मैं भी अशक्त हूँ सो क्या करूं? बोझे के उठाने को प्राप्त हूं। आज के दिन में अपने पुत्र के खेत में सारा दिन चलाया गया ॥४०॥ और इस मेरे पुत्र ने भूख को प्राप्त हुए मेरे मुख को बांधकर, मुझे बहुत मारा, इसने यह आज श्राद्ध वृथा ही किया, क्योंकि मुझे तो आज बड़ा कष्ट हुआ ॥४१॥ इतनी कथा सुनाय श्री कृष्णजी बोले—हे युधिष्ठिर! उन दोनों माता पिता के इस प्रकार कथन करते समय जो कुछ उन दोनों ने कहा जिस को उनके पुत्र सुमति ने सुनकर अपने माता और पिता जान कर उस रात्रिमें उसी समय उस अपनी माता को भोजन दिया ॥४२॥४३॥

अब कहिये पुराण की पुष्टि पुराण ही रद्द कर रहे हैं अब मैं इससे आगे आपको वह कथा श्रवण कराता हूँ कि-गयाश्राद्ध से प्रेत भाव नहीं छूटता। देखिये पद्मपुराण षष्ठ उत्तर खण्ड अध्याय १९६ में लिखा है कि-तुङ्गभद्रा नाम नदी के तट पर वर्ण आचार से युक्त धनधान्य संयुक्त कोहल नाम ग्राम में आत्मदेव एक श्रेष्ठ ब्राह्मण वेद विद्या की विधि में निपुण रहता था। उसकी स्त्री धुंधुली नाम थी। जिसको पुत्र न होने का बड़ा शोक रहा करता था। इसी दुःख में घर से निकल बाहर को चल दिया। मार्ग में एक तालाब से जल पी एक वृक्ष की छाया में बैठ गया वहाँ थोड़ी देर के पीछे एक संन्यासी जी भी आये। जो बड़े शान्त चित्त थे। उनको बिठाकर उनसे प्रश्नोत्तर करने लगा थोड़ी देर पीछे संन्यासी जी ने कहा कि आत्मदेव तुमको क्या क्लेश है। उसने कहा कि बिना पुत्र के मैं महादुखी हो रहा हूँ यह सुन संन्यासी जी को बड़ी दया आई फिर योगी महाराज ने आत्मदेव के माथे की अक्षरमाला को देखकर कहा कि तुम्हारे सात जन्म तक पुत्र की प्राप्ति नहीं है, तुम आग्रह न करो कर्म की गति बड़ी बलवान है इस लिये ज्ञान को प्राप्त होकर सुखी रहो तब आत्मदेव ने सिद्धजी से कहा कि ज्ञान से हमारे क्या होगा किसी प्रकार पुत्र दीजिये वरन् मैं आपके आगे प्राणों को छोड़ दूंगा तब योगी जी ने कहा इस प्रकार के पुत्र से तुमको सुख न होगा इतना कह एक फल देकर कहा कि इसको अपनी स्त्री को देना। तुम्हारे अवश्यमेव पुत्र होगा आत्मदेव वहाँ से घर आये और सब वृत्तांत स्त्री से कहकर वह फल भी उसको देदिया, उसने अपनी सखी को बुला सब वृत्तांत कह कर कहा कि यदि मैंने इसको खाया तो मेरे गर्भ रह जावेगा। उसको मैं कैसे सह सकूंगी जो गर्भ तिरछा होगया तो मेरे प्राण निकल जायेंगे पुत्र उत्पन्न होने पर बड़े दुःख होते हैं इस लिये मैं नहीं खाऊंगी तब सखी ने भी कहा कि ऐसा ही करो जब पति ने पूछा तो कह दिया कि खा लिया। इस बीच में उसकी बहिन अपनी इच्छा से उसके घर आई उससे सब अपना वृत्तांत कह कर कहा कि मुझको बड़ी चिन्ता हो रही है क्या करूं तब बहिन ने कहा कि मेरे गर्भ है उत्पन्न होने पर मैं तुमको देदूंगी, तुम तब तक गर्भवती के समान छिपकर घर में रहो और परीक्षा के लिये यह फल गौ को दीजिये यह कह वह अपने घरको गई धुंधुली ने ऐसा ही किया जैसा उसकी बहिनने कहा था कालत

पाकर धुंधुली की बहिन के पुत्र उत्पन्न हुआ। जो वह धुंधुली को चुपके से दे गई तब धुंधुली ने पति से कहा कि सुख पूर्वक पुत्र उत्पन्न होगया। यह सुन वह बड़े प्रसन्न हुए। और ब्राह्मणों को दान दिया और जात कर्म किया। घर में गीत होने लगे। तब धुंधुली ने पति से कहा कि हमारे स्तनों में दूध नहीं है। इस लिये मेरी बहिन को बुला दीजिये जिसके एक महीना हुआ कि पुत्र होकर मर गया है। उसने ऐसा ही किया और उसने उसका नाम धुंधुकारी रक्खा वह नित्य पुष्ट होने लगा।

त्रिमासे निर्गतेच्चाथ सा धेनुः सुषुवेऽर्भकम् ॥१६॥

तीन महीने के पीछे गौ के बालक उत्पन्न हुआ जो सब अंगों से सुन्दर दिव्य निर्मल दीप्तिमान था, बालक को देख आत्मदेव ने आप ही उसके संस्कार किये बहुधा मनुष्य उसके देखने को आये, गौ के समान कान होने के कारण गौकर्ण नाम पड़ा. दोनों जब जवान हुए तो गौकर्ण तो पण्डित और ज्ञानी हुए और धुंधुकारी महादुष्ट जो खेलते हुए बालकों को कुएं में डाल दिया करता था. जिसने वेश्या प्रसंग से पिता के सब द्रव्य का नाश कर दिया तब पिताने कहा कि इससे तो बिना पुत्र के मैं अच्छा था योगी के वचन सत्य हुए अब मैं कहां जाऊं क्या आग में या कुएं में गिरकर प्राण देदूं इतने में गौकर्ण आये और उसने उनको उपदेश दिया कि कौन पुत्र है, उससे कुछ नहीं तुम वन में जाकर आनन्द करो। पिता पुत्र के उत्तम वचनों को सुन वन में जा आनन्द करने लगे इधर धुंधुकारी ने माता से कहा कि द्रव्य बतलाओ नहीं तो मैं तुझको मार डालूंगा वह दुखी हो कुए में गिर कर मर गई, जिसको निकाल गौकर्ण ने उसकी जाति के ब्राह्मणों को बुलाकर दाह कर्म कराया और धुंधुकारी वेश्या के साथ आनन्द करने लगा। फिर उस वेश्या ने आभूषण और वस्त्रों की इच्छा प्रकट कर कहा कि आप हमको दीजिये वरन अन्य पुरुष के पास चली जाऊंगी वह रात्रि को चोरी कर लाया और उसको दिया फिर तो वेश्या अमूल्य भूषण वस्त्र देखकर विचार करने लगी कि यह चोरी करके लाता है किसी दिन राजा से मारा जायगा इस लिये हमको इसको मार द्रव्य लेकर पृथक् हो जाना चाहिये, यह मान [illegible] फांसी कर मारा, जब वह इस

प्रकार न मरा तो जलते हुए अंगार उस के मुख पर रख दिये वह मर गया और महाप्रेत हुआ। इधर गौकर्ण उसको मरा जान तीर्थ यात्रा को गया और गया में उसका श्राद्ध कर घर को आया, एक दिन गौकर्ण अपने मकान में सो रहा था उस समय धुंधकारी ने अपना भयंकर रूप धारण कर उसको दिखलाया, गौकर्ण के पूछने पर उसने अपना पिछला सब वृत्तान्त कहा कि मैं धुन्धकारी नामक तुम्हारा भाई हूँ, अपने कर्म दोष से प्रेत हुआ हूँ, माता को बहुत दुःख दिया, वह कुए में गिरकर मर गई, फिर धनके लालच से मुझको फांसी देकर मारा, और मुंह पर अंगारे रख कर जला दिया, इससे मैं प्रेतभाव को प्राप्त हुआ, अब आप मुझको प्रेतभाव से छुड़ाइये यह सुन गौकर्ण ने दुःखी होकर धुन्धकारी से कहा कि मैंने तुमको मनुष्यों के मुख से मृतक हुआ सुनकर गया जी में पिण्ड दिया था, तुम प्रेत कैसे हो गये, गयाजी में पिण्ड देने से दुर्गतिवालों को भी शुभगति निस्संदेह प्राप्त होती है. तुम कैसे स्वर्ग को नहीं गये भाई गौकर्ण महात्मा के वचन सुन अध्याय १८७॥

तुभ्यं दत्तोमया पिण्डो गयायां त्वामहं मृतम् ॥४७॥
श्रुत्वा लोक मुखात् तस्मात्त्वं कथं प्रेततांगतः ॥
गया पिण्ड प्रदानेन दुर्गतोपि शुभांगतिम् ॥४८॥

दुःखित आत्मा धुन्धकारी ने कहा कि सौ गया के श्राद्ध से मेरी मुक्ति न होगी, हमारे उद्धार के लिये आपको दूसरा उपाय करना चाहिये जिसको गौकर्ण सुन विस्मय होकर बोला—

धुन्धकारी दुःखितात्मा प्रोवाच पुरतः स्थितः ।
गया श्राद्ध शतेनापि न मे मुक्तिर्भविष्यति ॥५०॥
उपायं त्वपरं किंचिन्मम उद्धारय त्वया ।
इति तद्वचनं श्रुत्वा गोकर्णो विस्मयं गतः ॥५१॥

श्राद्धों से मुक्ति नहीं है तो तुम्हारी असाध्य गति है. हे प्रेत इस समय तुम निर्भय होकर अपने स्थान को जाओ. यह सुन धुन्धकारी अपने स्थान को गया, फिर गौकर्ण ने ज्ञान विरादकी कुल बान्धवों [illegible] के जानने वाले

दूसरी गांठ फटी इस प्रकार एक २ गांठ फटती रही सातवीं गांठ के छिन्न होने पर धुन्धकारी शीघ्र ही प्रेतभाव को छोड़कर सुन्दर रूप धारण कर तुलसीदल से सुशोभित हो पीताम्बर धारण कर मेघों के समान भूषणों से युक्त हो प्रकाशित हो गया सम्पूर्ण तत्वदृष्टि होकर गोकर्ण भाई को नमस्कार कर बोला हे भाई! आपने दया कर प्रेत के कष्ट से हमको छुड़ा दिया। भागवत की वार्त्ता धन्य है? वैसे ही विष्णु लोक की गति देने वाला सप्ताह भी धन्य है। जिसके प्रभाव से प्रेतभाव से अत्यन्त व्याकुल मैं विमुक्त हो गया।

त्वयाहं मोचितो बन्धो! कृपया प्रेत कश्मलात्।
धन्या भागवती वार्त्ता प्रेतत्वोन्मूलिनी श्रुता ॥८५॥
सप्ताहोपि तथा धन्यो विष्णुलोक गतिप्रदः।
यत्प्रभावाद्विमुक्तोहं प्रेतभावाद्भृशातुरः ॥८६॥
आर्द्रं शुष्कं लघुस्थूलं वाङ्मनः कर्मभिः कृतम्।
पातकं भस्मसात्कुर्यात्सप्ताहोऽग्निरिवेन्धनम् ॥८७॥

नोट—अब आप यह बतलाइये कि गोकर्ण के गया श्राद्ध से धुन्धकारी का प्रेतत्व नहीं गया, फिर मुक्ति कैसी? फिर अन्यों के जाने का क्या प्रमाण, हां सूर्य्य नारायण की सम्मति से जब श्रीमद्भागवत का सप्ताह सुनाया तो उसका प्रेतत्व गया। अब बतलाइये दोनों में कौन ठीक है इसके उपरान्त यह भी विचार कीजिये कि जब व्यास जी ने १७ पुराणों के पश्चात् भागवत् को बनाया तो उससे पूर्व प्रेतों की मुक्ति किस प्रकार हुई? श्रीमान् वास्तव में न गया में पिण्ड देने से प्रेतत्व छूटता है न सप्ताह सुनने से। यथार्थ में मनुष्य अपने २ कर्म्मों का फल पाता है न कि अन्य कर्म्मों का फल, जैसा कि मैं आप को पूर्व सुना चुका हूँ। इस लिये आप स्वयं जान लीजिये कि मरों का गया आदि में श्राद्ध क्या लाभ देता है। सच तो यह है कि स्वार्थी पुरुषों की उस्तादी है अपने २ स्वार्थ की विचित्र कथायें लिखते रहे और अन्त में वह सब ऋषि व्यास महाराज के सिर पर चपेट

हैं। इस कथा में गौ के पेट से मनुष्य की उत्पत्ति लिखी है, वह भी एक कल्प के स्थान से, इस पर भी ध्यान विचार करें।

देखिये महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय ९१ में लिखा है कि युधिष्ठिर महाराज पितामह से पूछते हैं कि किस काल में किस मुनि ने श्राद्ध को चलाया।

केन संकल्पितं श्राद्धं कस्मिन्काले किमात्मकम्।
भृग्वङ्गिरसके काले मुनिना कतरेण वा॥१॥

इसको सुन भीष्म जी ने कहा कि हे राजन्! अत्रि के गोत्र में एक निमि नाम के ऋषि हुए उनका पुत्र श्रीमान हुआ सो कुछ काल के पीछे मर गया जिसके विरह में वह रात दिन व्याकुल रहते थे जिससे उनकी बुद्धि विक्षिप्त हो गई जिससे वह अपने पुत्र श्रीमान् के खान, पान, बैठना, उठना, चलना, फिरना, आदि उसकी क्रियाओं का स्मरण करते रहते थे। एक अमावस्या को कुछ ब्राह्मणों को बुला दक्षिणाग्र कुशों पर बिठा स्वयं शुचि हो लवण वर्जित भोजन कराया और दक्षिणाग्र कुशा पर श्रीमान् के नाम और गोत्र का उच्चारण कर कुछ पिण्ड अपने मृतक पुत्र के नाम पर रक्खे तो उनको बड़ा शोक हुआ।

तत्कृत्वा स मुनिश्रेष्ठो धर्मसंकरमात्मनः।
पश्चात्तापेन महता तप्यमानोऽभ्यचिन्तयत्॥१६॥

इस से प्रथम इस कर्म को किसी मुनि ने नहीं किया। हाय यह मैंने क्या अनुचित कर्म किया ऐसा न हो कि ब्राह्मण मुझको भस्म करदें।

अकृतं मुनिभिः पूर्वं किं मयेदमनुष्ठितम्।
कथं नु शापेन न मां दहेयुर्ब्राह्मणा इति॥१७॥

इस प्रकार चिन्ता करते हुए अपने कर्त्ता अत्रि का स्मरण किया वे आकर सब समझा गये कि अब चिन्ता न करो ब्रह्मा ने इस कल्प को विचारा था अब तुमने उसका आरम्भ कर दिया। भीष्म जी कहते हैं कि इसी निमि से यह श्राद्ध चला।

निमेः संकल्पितस्तेयं पितृयज्ञस्तपोधन ! ॥२०॥

इसको विशेषता से जानने के लिये हम वाराहपुराण से निमि की कथा सुनाते हैं।

निमि और महात्मा नारद का सम्वाद ।

वाराहपुराण अध्याय १८१ में लिखा है कि मनु के वंश में अत्रेय नाम ब्राह्मण जिसका पुत्र निमि और उसका पुत्र श्रीमान् जो बड़ा तपस्वी था काल वश हो परलोक गमन कर गया जिसके कारण महात्मा निमि रातदिन शोकातुर रहने लगे कुछ दिन व्यतीत होने पर माघ मास की द्वादशी को महात्मा के मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि पुत्र का श्राद्ध करना चाहिये, यह विचार कर उसने बहुत प्रकार के मूल, फल, कन्द और मांसादि अनेक प्रकार के भक्ष्य पदार्थों को इकट्ठा करके—

यानि तस्यैव भोज्यानि न मूलानि फलानि च ।
यानि कानि च भक्ष्याणि नवश्चरल सम्भवः ॥३१॥
आमन्त्र्य ब्राह्मणं पर्वं शुचिर्भूत्वा समाहितः ॥३२॥

वाराह संस्कृत १८७ अध्याय ॥

ब्राह्मणों को निमन्त्रण दे पुत्र का स्मरण कर विधान और भक्ति से ब्राह्मणों को भोजन करा दक्षिणा दे विसर्जन कर दक्षिण दिशा में भूमि पर कुशों को बिछा उसके ऊपर नाम और गोत्र का उच्चारण कर पिण्ड दान किया फिर समाधि से परमात्मा का ध्यान कर बहुत रात्रि व्यतीत होने पर पुत्र शोक से व्याकुल होकर कहने लगा यह श्राद्ध आज तक किसी ने नहीं किया मैंने मोहवश यह काम किया जो [illegible] पुत्र के निमित्त दिया ।

अकृतं मुनिभिः सर्वं किं मया [illegible] ॥२३॥

यदि मेरा कृत्य मुनियों को विदित हो तो शाप देकर उसी क्षण भस्म करदें ।

कथं ते मुनयः [illegible] ॥२४॥

यदि इस कर्म को देवता असुर, गन्धर्व, पिशाच, मूर्ख और राक्षस जान लें तो हमको क्या कहें।

[illegible] गन्धर्व पिशाचोरग राक्षसः।
किं वक्ष्यन्ति च मां सर्वे ये वै पितृकृते स्थिताः ॥[illegible]॥

हाय हमने बिना विचारे क्या किया। इस प्रकार रात्रि गई दिन आया फिर कहने लगा कि हाय लोक में निन्दा हुई और पुत्र का [illegible] न मिला। हम बड़े मूर्ख हैं। हमारे पढ़ने, योग करने और ज्ञान को धिक्कार है इस भांति अनेक प्रकार से रुदन कर रहे थे कि इतने में [illegible] नारद जी पधारे जिनका मुनि ने सत्कार कर बिठाया और विधि [illegible] सन्मुख खड़े हुए, जिनको देख नारद मुनि ने कहा कि इस विषय में महात्मा जन कुछ विचार नहीं करते क्योंकि सबका जीवन आयु के अनुकूल होता है काल आने पर कोई एक श्वांस भी नहीं ले सकता। तब मुनि ने कहा कि मैंने स्नेह में फंस कर पुत्र के निमित्त सात ब्राह्मणों को भोजन कराया और दक्षिणा दे विसर्जन किया। भूमि में कुश रख दक्षिण मुख हो जल के साथ पिण्डदान दे नाम उच्चारण किया। हे महात्मन! यह शोक मोह के वश होने से जो [illegible] हुआ है [illegible] आप [illegible] ज्ञान दे क्षमा करें और [illegible] उपदेश करें जिनसे हमारा पाप दूर हो और जब कर्म को हमने किया वह पहले महात्मा, ऋषि और मुनि किसी ने नहीं किया इस कारण मैं [illegible] भयभीत हो रहा हूं।

अनार्यं [illegible] कीर्तितं कथं द्विज।
[illegible] ॥[illegible]॥
न च श्रुतं मया पूर्वं न [illegible] कृतम्।
भयं तीव्रं [illegible] ॥[illegible]॥

वाराह [illegible] अ० १८७। ६५

कृपा करके हमारे भय को दूर कीजिये तब नारद जी ने कहा कि भय मत करो पितरों की तृप्ति में प्राप्त हो जो आपने किया है उस में किसी

भांति का अधर्म्म नहीं है केवल धर्म ही है, इसको सुन निमि ने मन, वच, कर्म से प्रार्थना की कि पितरों में आप की शरण हूँ, इतना कहते ही निमि का पिता पितृ लोक से आया और निमि को पुत्र शोक से दुःखी देख समझाने लगे कि तुमने पितृयज्ञ का संकल्प किया है इस धर्म्म की ब्रह्मा जी ने पितरों के लिये स्वयं आज्ञा दी है इस लिये यह यज्ञ करना योग्य है।

पितृयज्ञेति निर्दिष्टो धर्मोऽयं ब्रह्मणास्वयम् ॥

इस पर नारद ने ब्रह्मा जी को प्रणाम कर पितृ यज्ञ का विधान सुनाया कि जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु अवश्य होती है और मरने पर धर्मराज की आज्ञा पालन करनी होती है। जन्म लेकर जितने जीव आते हैं उन में किसी का अमरत्व (अर्थात् मृत्यु न हो) नहीं होता। इस लिये हे निमि! जिसने जन्म लिया है वह अवश्य मरेगा और मरा हुआ अवश्य जन्म लेगा इस लिये वह कर्म करना उचित है जिसके करने से मनुष्य के सब पापों का प्रायश्चित्त तथा मुक्ति प्राप्त हो। हे निमि विचार करो कि सात्विक, राजस और तामस इन तीन गुणों के अनुसार मनुष्य कर्म्म करते हैं और उसी भांति उनकी गति होती है। सात्विक कर्म करना कठिन है राजस और तामस कर्म करने से मनुष्य अल्पायु और अल्प बुद्धि होते हैं। सात्विक कर्म करने से प्राण त्यागने पर देवता, राजस में मनुष्य तथा तामस करने से राक्षस होना है। हे निमि! धर्मज्ञान, वैराग्य और [illegible] कर्म को सात्विक कहते हैं। क्रूर, मिथ्यावादी और जीवहिंसक, लज्जाहीन और विषाद करने वाला तामस कहाता है जिसके करने से मनुष्य प्रेतयोनि में प्राप्त होता है। राजस गुण वे कहाते हैं कि जिनसे मनुष्यों में मान अश्रद्धा और नाना भांति के भोगों की इच्छा अपनी प्रशंसा और जिन्हों में यह धर्म है सो सात्विक गिने जाते हैं शान्ति, दान, ज्ञान, श्रद्धा, तप, ध्यान आदि करने से स्वर्ग व मोक्ष दोनों का अधिकारी होता है इस लिये निमि! निज पुत्र के मरने का शोक न करो। शोक करने से बुद्धि, बल और देह इन तीनों की हानि होती है इन्हीं की हानि होने से लज्जा, धृति, धर्म, कीर्ति, लक्ष्मी, नीति स्मृति और विवेक यह सब नष्ट हो जाते हैं। इस लिये हे निमि! इन बातों को विचार कर आप शोक त्याग कीजिये।

लज्जा धृतिर्मतिश्चैव श्रीः कीर्त्तिश्चस्मृतिर्नयः ।
त्यजन्ति सर्वं धर्मांश्च शोकेनोपहतं नरम् ॥
एवं शोकं त्वयाजित्वातु विशोको भव पुत्रक ! ॥८४॥

इसके पश्चात् फिर नारद जी ने मरण समय का कृत्य और श्राद्ध की सब क्रिया संक्षेप से निमि को सुनाई जिसको सुन निमि ने अपने को धन्य माना इस पर नारद जी ने कहा कि हे निमि ! तुमने निज प्रेत पुत्र के निमित्त जो श्राद्ध किया है यह आज से चारों वर्णों के सब मनुष्य करेंगे ।

कर्त्तव्या एव संस्कारः प्रेतभाव विशोधनः ।
नेमि प्रभृतिभिः शौचं चातुर्वर्ण्यस्य सर्वतः ।
भविष्यति न सन्देहो दृष्टपूर्वं स्वयम्भुवाः ॥७५॥
कृत्वातु धर्म संकल्पं प्रेतकार्यं विशेषतः ।
न भेतव्यं त्वयापुत्र ! प्रेतकार्ये कृते सति ॥७६॥
अद्यप्रभृति लोकेषु पितृयज्ञो भविष्यति ।
एवं यास्यसिकस्त्वं न शोकं कर्त्तुमर्हसि ॥

वाराहपुरा संस्कृत अ० १८८ श्लोक ७७ ॥

और तुमको इसके करने से अच्छा लोक प्राप्त होगा । तुम शिवलोक, विष्णुलोक, ब्रह्मलोक आदि लोकों में जहां इच्छा करोगे इस कर्म के प्रताप से वहां ही प्राप्त होगे ।

शिवलोकं ब्रह्मलोकं विष्णुलोकं संशयः ॥

श्री पण्डित जी !—इस व्याख्यान में विचारना यह है कि निमि महात्मा स्वयं आप वर्णन करते हैं कि मैंने मोह से पुत्र के निमित्त पिण्डदान किया जिस पर भी पुत्र न मिला ! हे नारद ! ऐसा काम प्रथम किसी ने

नहीं किया यदि निमि और नारद के सम्वाद को सत्य माना जावे तो यह भी सत्य मानना पड़ेगा कि निमि से प्रथम इस कार्य्य को किसी ने नहीं किया तो भला निमि के पुत्र से प्रथम जितने पुरुषों का मरण हुआ उनको कौन से कर्म्मों ने आनन्द दिया इसके उपरान्त जब नारदजी से मिलाप हुआ तो निमि ने अपनी भूल को फिर वर्णन किया तब नारदजी ने पितृयज्ञ का जहां विधान है सुनाया। वह कौन है, जो जन्मता है वह मरता है, जो मरता है वह जन्मता है, इस लिये मनुष्यों को ऐसे कर्म्म करने चाहियें जिससे मुक्ति हो और मुक्ति सात्विक अर्थात् ज्ञान, वैराग्य आदि के द्वारा प्राप्त होती है। इस लिये हे निमि, तुम मोह को त्याग कर कार्य्य करो क्योंकि मोह से धृति, धर्म्म, कीर्त्ति, स्मृति, और विवेक जाता रहता है। इसके उपरान्त यदि मृतकश्राद्ध से कुकर्मी जीव नरक से बच जाते हैं तो फिर पितृश्राद्ध में नारद महाराज ने यह क्यों कहा कि सात्विक कर्म करने से मोक्ष होती है फिर भला जो मरता है वह जन्मता है और जहां जन्मता है वहां कर्म करता है तो फिर भला श्राद्ध करके किसको नरक से पार किया जाता है।

भला पण्डितजी जब कर्म को प्रधान माना तो सम्पूर्ण आयु के अच्छे कर्म्मों का फल श्राद्ध न करने से कभी मिट सकता है। इसी भांति सारी आयु बुरे कर्म करने वाले के पुत्र के श्राद्ध करने से पाप मिट सकते हैं? कदापि नहीं? यदि ऐसा होता तो फिर क्या? नहीं नहीं प्रत्येक को अपने कर्म्मों के फलों को भोगना पड़ेगा।

श्रीमान् ने शिवपुराण, वाराहपुराण, भविष्यपुराण से श्राद्ध के विषय को सुना इनसे भी अनोखा श्राद्ध जीवित मनुष्यों के हितार्थ सुनाता हूँ अर्थात् जब कोई माता, पिता, भाई इत्यादि परदेश में हों या कारागार में हों तो वह अपने घर से उन मनुष्यों की तृप्ति अच्छे प्रकार से कर सकते हैं।

न जाने हमारे सनातनी भाइयों ने इसको क्यों भुला दिया। अतएव इसको सुन कर कार्य्य में लाना चाहिये। देखिये विष्णुपुराण चतुर्थ अंश अध्याय १३ में लिखा है—एक समय श्रीकृष्णचन्द्र महाराज के एक सम्बन्धी की मणि चोरी हो गई और वह मणि की चोरी श्रीकृष्ण महाराज को लगाई गई परन्तु यह मणि ऋक्षराज के बिल में पहुंच गई थी क्योंकि चोर और ही था उससे सिंह को मिली और सिंह से ऋक्ष को मिली थी फिर कृष्ण महाराज ऋक्ष के साथ युद्ध करने को उसकी गुफा में घुस गये थे और अपने साथियों को द्वार पर खड़ा कर गये।

[illegible] च [illegible] यदु[illegible]।

सात आठ दिन के भीतर श्रीकृष्ण महाराज को लौट कर न आते देख साथियों ने जाना कि श्रीकृष्ण जी को शत्रु ने मार डाला अतएव वे सब द्वारिकापुरी को लौट आये और उनके भाइयों से सब हाल कह दिया तब सब भाइयों ने उनकी श्राद्धादि क्रिया की जिससे श्रीकृष्ण जी के प्राणों की रक्षा होती रही।

[illegible]।
[illegible] प्राण [illegible] ॥२७॥

अन्त को कुछ काल में ऋक्ष को जीत श्रीकृष्ण जी मणि ले घर आये।

श्री पंडितजी—महाराज अब आप भले प्रकार समझ गये होंगे कि यहां [illegible] में श्रीकृष्ण महाराज का श्राद्ध किया गया जिससे वह पुष्ट होते रहे। इसी प्रकार दूर देशों में जाने वालों को घर पर ही भोजन दे देने से तृप्त करना चाहिये।

पण्डितजी—ने कहा कि सेठ जी अब इस विषय को समाप्त कीजिये बहुत हो गया।

सेठजी—श्रीमान् की जैसी आज्ञा मैं वैसा ही करूंगा परन्तु अब आप विचार तो कीजिये कि वेदों में तो मृतक श्राद्ध का विधान है ही नहीं उन्हीं के अनुसार पुराण भी पुकार २ कह रहे हैं कि श्राद्ध करने से कुछ लाभ नहीं होता जैसा कि आपने पद्मपुराण अ० १६६ के इतिहास का श्रवण किया कि धुंधकारी की श्राद्ध ही नहीं किन्तु गया में पिण्डदान देने से भी मुक्ति नहीं हुई श्री पं० जी जब पुराण ही बतला रहे हैं कि निमि ने श्राद्ध को चलाया फिर किस प्रकार श्राद्ध विधि वेदोक्त हो सकती है।

श्री पं० जी—सेठ जी! इतनी ही कथाओं से मैंने भले प्रकार समझ लिया कि केवल स्वार्थियों ने अपना प्रयोजन सिद्ध करने के लिये इन कथाओं को गढ़ लिया और महर्षि के नाम को बदनाम किया लालाजी वेद, बुद्धि और सृष्टिक्रम के विपरीत वाली गणेश महाराज की उत्पत्ति और मृतक श्राद्ध की कथाओं को सुन मेरी आत्मा तृप्त हो गई अब मैं इस समय पुराण लीला को नहीं सुनना चाहता हूं मैं जिन पुराणों पर बड़ा ही विश्वास करता था उनकी लीलाओं को सुन आज मेरी पुराणों से बहुत ही अश्रद्धा हो गई सेठ जी अब आप इतने विषय को भी मुद्रित करा दीजिये। देखें हमारे भाई इनका क्या उत्तर दें? मैं तो आज से ही अपने यजमानों को समझा बुझा इन मिथ्या रीतियों को उन से छुटा वेदोक्त विधि का पालन करना सिखाऊंगा। धन्य है स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज को कि जिन्होंने वेदोक्त मार्ग बतला कर हमको श्रेष्ठ विप्र बनाया मैं तन मन से महात्मा जी के चरणों को सिर नवाता हूं तदनन्तर आप को आशीर्वाद देता हूँ कि परम पिता परमेश्वर आपको सब प्रकार के आनन्द मंगल दें और अपने कटु वाक्यों के कहने की क्षमा मांगता हुआ आप की सहनशीलता का धन्यवाद देता हूँ परमात्मा आपको अधिक सहनशक्ति दे जिससे आप नाना प्रकार के कटु वाक्यों को सहन करते हुए देश का तन

मन और धन से उपकार करें अन्य सज्जनो ने कहा कि सेठ जी अब हम सब भी पुराणों की लीलाओं को सुन संतुष्ट हो गये अब आप बस करें पुनः--

अन्य महाशयों की ओर से लाला शङ्करलाल जी ने खड़े होकर कहा कि मैं आज श्रीमान् पण्डित जी को तथा सेठ जी को धन्यवाद देता हूं जिनकी परम कृपा से हम सबको पुराणों की अपूर्व और अद्भुत बातों को सुनने का अवसर मिला.पुनः हम श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और उनके गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी महाराज को कोटानुकोटि धन्यवाद देते हैं कि जिनकी कृपा से हमारे धर्म की रक्षा हुई।

सेठ [illegible] कि मैं प्रथम उस सर्व[illegible] [illegible] को कोटिशः धन्यवाद देता हूँ कि जिनकी [illegible] कृपा से मेरी इच्छा पूर्ण हुई पुनः श्रीमान् पण्डित रामप्रसाद जी और आप सज्जनों को धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने अमूल्य समय प्रदान कर मेरी मनोकामना सिद्ध की। आशा है कि श्रीमान् अन्य सब सज्जन जन निरपक्ष हो विचार कर सत्य का ग्रहण करेंगे इसके पश्चात् ब्रटिश गवर्नमेंट को धन्यवाद देता हूँ जिनके शासन में प्रत्येक मनुष्य अपने विचारों को प्रकट कर सकता है इसके पीछे महाशय छदम्मीलाल [illegible] ने भी पंडित [illegible] जी शर्म्मा संरक्षक महाविद्यालय [illegible] निर्मित भजन को हारमोनियम पर गाया—

भजन

टेक–मेरी यह अर्ज जगदीश्वर, दया कर आप सुन लीजे ।
हमारे जार्ज पञ्चम को, चिरआयुः हे प्रभो ! कीजे ॥

दयामय आप हैं फाजिल, अदल भी आपका कामिल ।
हमारे राजराजेश्वर को, दोनों ही अता कीजे ॥१॥

दया से दुःख को मेटें, अदल से सुख फैलावें ।
तेरी भक्ति में चित्त लावें, यह शक्ति दान दे दीजे ॥२॥

करें सम प्यार पुत्रों पर, वह गोरा हो चाहे काला ।
पिता के धर्म हैं जितने, वह सारे ही सिखा दीजे ॥३॥

बनाया राज का मारग, पिता तुमने जो वेदों में ।
उसी मारग का अनुयायी, शहन्शाह को बना दीजे ॥४॥

विनय अन्तिम ये शर्मा की, पिता जी आप से हरदम ।
हरिश्चन्द्र सा सतवादी, करण सा दानी कर दीजे ॥५॥

जिसको सुन सब महाशयों ने करतल ध्वनि से प्रसन्नता प्रकट कर श्री पञ्चशर्मा महोदय को धन्यवाद दिया पुनः सेठ जी ने निम्नलिखित मंत्र को पढ़ शान्ति की ।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्ति रापः शान्ति रोषधयः शान्ति र्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं ँ शान्ति शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ॥

श्री पण्डितजी—ने चलने की तय्यारी की।

सेठजी—ने खड़े होकर हाथ जोड़ बड़ी नम्रता से श्रीमान को नमस्ते व अन्य महाशयों को यथायोग्य कहा।

श्री पण्डितजी ने—प्रसन्नता पूर्वक [illegible] कहा और चल दिये। अन्य सज्जनों ने यथायोग्य कहा सेठ जी अपने कार्य्य में लग गये।

इति विंशति परिच्छेदः।

समाप्तोयं पुराणतत्त्वप्रकाशस्य तृतीयो भागः।

हमारी गृहस्थोपयोगी प्रसिद्ध सस्ती

पुस्तकें।

निम्नलिखित पुस्तकों की प्रशंसा में भारतवर्ष तथा विदेशी महानुभावों ने सैकड़ों प्रशंसापत्र भेजे हैं उन में से कुछ आप के अवलोकनार्थ लिखते हैं। कृपा करके ध्यान देकर पढ़िये।

नारायणी शिक्षा अर्थात् गृहस्थाश्रम

प्रथम भाग मूल्य २) डा० व्य० ।=)

विदेशीलाल जी दर्बन—से लिखते हैं कि जिस तरह धातु में स्वर्ण फलों में आम, दूध में घृत, मीठे में शहद, जीवों में मनुष्य और प्रकाश में सूर्य है वैसी ही आप की पुस्तक नारायणी है। श्री० एन० निरंजन स्वामी **फाइफसजर बूयशावर**—इस के पढ़ने से मेरी आत्मा को जितना आनन्द मिला वह किसी प्रकार लिख नहीं सकता वास्तव में आप ने गागर में सागर को भरने का यत्न किया है योग्य गृहस्थ आप की इस पुस्तक को पढ़ बिना धन्यवाद दिये नहीं रह सकता। प० महावीरप्रसाद जी भूतपूर्व सम्पादक सरस्वती-इस सस्ती और उपयोगी पुस्तक में सैकड़ों बातें ऐसी हैं जिन का जानना प्रत्येक गृहस्थ को ज़रूरी है......" पं० विष्णुलाल जी सबजज पुस्तक प्रत्येक गृहस्थ को रखने योग्य है। बा० रामनारायण जी तिवारी पुस्तक अत्यन्त ही उपयोगी है। श्री सम्पादक जी आर्यमित्र, भ्रमर, इन्दु, वेदप्रकाश, मतवाला आदि २ ने गृहस्थ में रखने योग्य एक यह ही पुस्तक बतलाई है। **देशबन्धुराय मुलतान**—नारायणी शिक्षा बहुत ही उपयोगी पुस्तक है। म० बच्चाराम जी दीघाट—नारायणीशिक्षा सामाजिक तथा धार्मिक उन्नति के लिये एक दिव्य सोपान रूप है। भाषा सरल और सराहनीय है। श्री बा० कृष्णप्रसाद जी तहसीलदार कैसरगञ्ज—नारायणी शिक्षा बहुत ही उपयोगी पुस्तक है। म० भोजराज जी फीरोज़पुर नारायणी शिक्षा प्रत्येक जन को उपयोगी है।

स्वर्गीय श्री स्वामी नित्यानन्द जी सरस्वती

मैंने आपकी बनाई हुई पुस्तकों को अच्छे प्रकार से देखा, यह सब किताबें व्यक्ति को शारीरिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति करने वाली हैं। विशेष खूबी यह है कि प्रत्येक विषय के साबित करने के लिये वेद, स्मृति, और पुराण इत्यादि के प्रमाण अच्छे प्रकार से दिये हैं, जिन के कारण इन पुस्तकों के पढ़ने वाले पूर्ण लाभ उठाते हैं। दौरे में मुझ से आप की पुस्तकों की अनेकान पुरुषों ने प्रशंसा की, वास्तव में वह प्रशंसा ठीक है, क्योंकि आप ने इन के लिखने में बहुत परिश्रम किया है। इस लिये [illegible] आपके बहुत मशकूर हैं। मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि आप अपने जीवन भर इस उपयोगी कार्य को [illegible] करते रहें जिस से हिन्दू में वैदिक धर्मज्ञान की उन्नति हो कर सब प्रकार आनन्द हो।
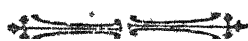
बा० नन्दलालसिंह जी बी. ए., बी. एस, सी. एल. एल. बी.

तिलहर के ...... जी ने यह पुस्तक लिखकर स्त्री जाति का बहुत उपकार किया है। हम मुं० जी को इस सफलता के लिये बधाई देते हैं। इस में प्रायः उन सब बातों का समावेश है जो बालिका, युवति और वृद्धा तीनों के लिये विशेष उपयोगी है। यदि इस शिक्षा को स्त्री-उपयोगी बातों का विश्वकोश कहें तो उचित है। प्रत्येक को अवश्य रखनी चाहिये।

बाबू गोकुलामिल जी हेडमास्टर, आर्य स्कूल, होशियारपुर।

मेरी स्त्री ने आरम्भ से लेकर आखीर तक भली भांति पढ़ा और मैंने भी कहीं २ देखा, सचमुच स्त्री और पुरुषों के लिये बड़ी लाभदायक है, मैंने और मेरी धर्मपत्नी ने स्त्री-शिक्षा की अनेक पुस्तकों को पढ़ा है परन्तु ऐसी उत्तम और लाभदायक किसी पुस्तक को नहीं पाया। आप ने यथार्थ में आर्य जाति पर महान् उपकार किया है जो ऐसी उत्तम और धार्मिक आकर्षक और चित्त पर प्रभाव डालने वाली पुस्तक निर्माण की तिस पर लुत्फ़ यह है कि मूल्य भी

झरिया मातृभूमि, बा० उदितनारायण बलदेवप्रसाद जी मैथिल दानसाह प्रान्त इटावा, श्रीयुत मा० शिवप्रसाद जी वर्मा मुरादाबाद, मुंशीलाल माजी छपरा, बा० मोहनसिंह जी सागरसिंह जी देहरादून, श्रीमहाशय वीरवर्मा स्वामी यन्त्रालय देहरादून, श्री कालिकाप्रसाद जी कनाई घाट (सिलहट) श्रीयुत नत्थूराम जी आचार्य नन्दानगर (होशियारपुर) श्रीयुत लाला रामप्रसाद जी बड़ा बाज़ार भरतपुर, श्रीयुत मंगलदेव शर्मा कोटला (आगरा) एवं सम्पादक श्रीमहात्मा मुंशीराम जी 'सद्धर्मप्रचारक' प० पुरीश्वर आर्यावर्त्त दानापुर, श्री० सम्पादक आर्यधर्मप्रकाश, श्री० सम्पादक भारत सुदशा प्रवर्त्तक आदि अनेक सभ्य पुरुषों के प्रशंसायुक्त पत्र आ चुके हैं ।

पुत्री उपदेश

गृहस्थाश्रम का दूसरा भाग मू० १।) डा० म० ।।)

रायबहादुर पं० शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए०

इसमें बहुत ही बढ़िया रचना है····ग्रन्थ उपादेय है सत्पुरुषों के उदाहरण अच्छे दिये गये हैं प्रकरण एक से एक बढ़ कर दिये गये हैं अतएव यह ग्रन्थ भद्र पुरुषों के यहां रहने योग्य है ।

श्री० बा० कन्नोमल जी जज धौलपुर ।

पुत्री उपदेश नामक पुस्तक कन्याओं के लिये परमोपयोगी है बालिकाओं के जानने और मनोधारण योग्य जितनी बातें हैं उन सभी का समावेश इस पुस्तक में है कथा और कहानियां बड़ी रोचक और शिक्षाप्रद हैं पुस्तक सरल सुबोध और शुद्ध हिन्दी में लिखी हुई है सभी कन्या पाठशालाओं में इसका प्रवेश होना चाहिये । लड़कियों को पारितोषिक देने के लिये तो यह एक ही पुस्तक है ।

श्री रायसाहब [illegible] एम. ए. एल.-एल.बी.

M. R. A. S. मेम्बर इलाहाबाद।

[illegible]

आपकी पुत्री उपदेश नामक पुस्तक को मैंने बड़ी दिलचस्पी से पढ़ा। हिन्दी साहित्य में यह एक नवीन मार्ग का पद प्रदर्शक है। हिन्दी साहित्य आज कल की साधारणतया मिलने वाली पुस्तकों के समान शुष्क तथा निरर्थक नहीं है किन्तु यह एक सजीव तथा उत्तम शिक्षाओं का संग्रह है।

श्री बाबू श्यामसुन्दरलाल जी वकील मैनपुरी।

यह ग्रन्थ मुंशीजी की अन्य पुस्तकों से मुझे बड़ा उत्तम प्रतीत हुआ क्योंकि इसमें मानव समाज में स्त्रियों का आदर्श जीवन की महत्ता, पतिव्रत धर्म, कुटुम्ब व्यवहार, सच्चा बड़प्पन देशोन्नति, गृहधर्म, [illegible] आदि बातों का उपदेश ऐसे मीठे तथा सरस शब्दों में वर्णन किया गया है कि हृदय को उनमें सहसा पढ़ते २ अनुराग उत्पन्न हो जाता है। शिक्षाप्रद कहानियों का भी उल्लेख है सर्वतो दृष्टि से यह ग्रन्थ ऐसा उपयोगी है कि प्रत्येक सद्गृहस्थ को यह पुस्तक अपने यहां रखनी चाहिये। छपाई, कागज़ उत्तम मूल्य भी बहुत कम है।

भारतके प्रसिद्ध उपदेशक स्वर्गीय पं० हरिशंकर व्यास मुरार

गृहस्थाश्रम के दूसरे भाग को मैंने आद्योपान्त पढ़ा सुन्दर उत्तम शिक्षा उच्च भाव, मनोहर वाक्य रचना बतला रही है कि लेखक का जीवन पवित्र है यदि प्रत्येक गृह में इस पुस्तक का नियम पूर्वक स्वाध्याय हो तो निःसन्देह पुत्र पुत्रियों का जीवन आदर्श बन सकता है इस लिये मैं ज़ोर के साथ प्रत्येक गृहस्थी से प्रार्थना करता हूं कि इस उपयोगी पुस्तक को मंगा कर अपने गृहों की शोभा को बढ़ावें।

उपमन्त्री आ०.प्र० नि० सभा संयुक्त प्रान्त ।

वास्तव में यह पुस्तक स्त्रियों और कन्याओं के लिये अत्यन्त शिक्षा पूर्ण है उनके लिये जिन २ बातों का जानना ज़रूरी है वे सब बातें इस पुस्तक में अच्छे प्रकार वर्णन की गई हैं लेखक महाराज का उद्योग सराहनीय है।
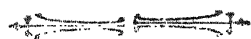
श्री डाक्टर ज्वाला प्रसाद जी वानप्रस्थी जी

उपमन्त्री श्री. आ. प्र. नि. सभा यू. पी.

इस पुस्तक को रच कर आपने बड़ा उपकार किया है पुस्तक क्या ? शिक्षाओं का कोश है कई स्थल [illegible] ।
मनोरंजक इतनी है कि प्रारम्भ कर छोड़ने को जी नहीं चाहता। एक से एक कहानी मनोरंजक शिक्षा प्रद और चित्ताकर्षक है मेरा दावा है कि स्त्रियां इस से अत्यन्त लाभ उठा सकती हैं।

श्री० पं० महेशीलालजी डिप्टी इन्सपेक्टर बदायूं ।

पुस्तक क्या है मानो फूलों का रस है, या यों कहिये कि गड़े हुए खज़ानों को आपने खोद कर निकाला है।

श्री० ठा० गिरवरसिंहजी सब डिप्टी इन्सपेक्टर

यह पुस्तक मनुष्य मात्र के जीवन का पथ प्रदर्शक और सुधारक है इस के पाठ से वह अपने जीवन को अनुभवी बना सकता है। स्त्री शिक्षा के लिये यह अनुपम पुस्तक है इसके सब विषय उपयोगी और मनोरञ्जक हैं वास्तव में बड़ी योग्यता से लिखी गई है।

बा० रामनारायण जी प्रधान आ० स० बाराबंकी

पुत्री उपदेश योग्यता पूर्वक लिखी गई है विषय उपयोगी मनोरञ्जक और शिक्षा पूर्ण है स्त्री शिक्षा के लिये यह पुस्तक बहुत उपयोगी है।

अठारह पुराणों की आलोचना

॥ पुराण तत्वप्रकाश ॥

तीन भाग मूल्य २)

पुराण तत्व प्रकाश क्या है? यह ५०० पृष्ठ की पुस्तक सनातनधर्म सभा के माननीय अठारह पुराणों की आलोचना है जिसके पाठ मात्र से पुराणों का [illegible] खुल जाता है, उसके भीतरी तिलस्मातों का भयानक दृश्य स्पष्ट दृष्टि आने लगता है। इसके लिखने का ढंग इतना प्रिय और रोचक है यदि एक बार हाथ में ली तो बिना समाप्त किये आप कभी न छोड़ेंगे। स्त्रियों और पुत्रियों के यह बड़े काम की है क्योंकि स्त्रियां ही पुराणों के लेखों पर मोहित होकर तन, मन, धन, न्यौछावर कर पुरुषों को भी वैदिक सिद्धान्तों से गिरा देती हैं, अतएव युवतियों तथा बहिनों को अवश्य पाठ कराइये जिससे उनका हृदय ज्ञान से पूरित हो जावे। इसके अतिरिक्त इसमें बड़ा मज़ा यह है कि आप इस अमूल्य पुस्तक को बगल में दबा सनातनी भाइयों एवं पंडितों से धड़ाधड़ शंका समाधान कर अपने चित्त को शान्त कीजिये इसमें मालूमात का ख़ज़ाना बहुत है इस लिये हमारे सनातनी भाइयों के लिये भी यह बड़ा उपयोगी क्योंकि जिन्होंने अठारह पुराणों के कभी दर्शन नहीं किये उनको इससे सनातन महिमा का यथार्थ ज्ञान होता है इस लिये प्रत्येक मनुष्य को पाठ कर सत्यासत्य का विचार करना चाहिये कि क्या अठारह पुराण महर्षि व्यास के बनाये हुए हैं [illegible] क्या है पुराणों का पूरा खाका इसके अन्दर है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, देवी महारानी की करतूत, तमाम पुराणों की रचना, ब्रह्मा, विष्णु, शिव का [illegible] होना विष्णु के कान के मैल से मधुकैटभ का उत्पन्न होना, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, वशिष्ठ, विश्वामित्र, बृहस्पति तथा शुक्र की अपार लीला, त्रिदेव के अनोखे कर्तव्यों का फोटो, कलि महात्म्य और उसके दूर होने का सरल उपाय गङ्गा महारानी की विचित्र उत्पत्ति गङ्गामहारानी का स्वपाप मोचन करना, राजा वेन के मरने पर उसकी भुजाओं से निषाद और पृथु का उत्पन्न होना, वृक्षों से मरीषा का जन्म, रेवती के छोटे करने की अजीब तरकीब, राजा निमि से पुत्र का उत्पन्न होना बलदेव जी का मदिरापान कर यमुना जी को खींचना, बल के शरीर से सोना चांदी आदि का उत्पन्न होना राजा सगर की रानी के साठ हज़ार पुत्रों का उत्पन्न होना, देवताओं से वृक्षों, ब्रह्मा जी के कान से दिशाओं की उत्पत्ति, राजा का हिरणी के साथ वार्तालाप, मनु की पुत्री का पुत्र हो जाना, कचका टुकड़े कर राक्षसों का खाना फिर उसे जीवित निकालना, हिरणी के पेट से शृङ्गी ऋषि का, राजा की कोख से पुत्र का जन्म, जन्तु नाम पुत्र की चर्बी से हवन कर उससे रानी के पुत्र का होना इत्यादि बातोंके उपरान्त गणेश महाराज की अद्भुत उत्पत्ति और मृतक श्राद्ध आदि का बड़ी खूबी से वर्णन है, प्यारे पाठको! एकबार अवश्य इसका पाठकर अक्षयसुख का अनुभव कीजिये।

सुनिये इसकी बाबत लोग क्या कहते हैं।

सर्दारनी सदाकौर [illegible]

पुराणतत्त्वप्रकाश बहुत उत्तम तरीके से लिखी गई है। १८ पुराणों का [illegible] इसमें लिख दिया है चूंकि लोगों को पौराणिक भाइयों से बहुत [illegible] पड़ता है इस लिये सर्व साधारण वा आर्य भाइयों को एक एक पुस्तक अवश्य ही अपने पास रखना चाहिये।

श्री० पं० पद्मसिंह जी सम्पादक।

भारतोदय महाविद्यालय ज्वालापुर यू० पी०

इस पुस्तक में श्रीमद्भागवत, [illegible] पद्म, विष्णु, लिङ्ग, अग्नि, कूर्म, वाराह ब्रह्मवर्त्त, वामनादि पुराणों से सभ्यता पूर्वक यह दर्शाया है कि १८ पुराण महर्षि व्यास प्रणीत नहीं हैं। इस पुस्तक में आर्य सामाजिक दुनियां के ग्रन्थकारों में प्रसिद्ध मु० [illegible] जी वैश्य ने बड़े परिश्रम से काम किया है, सब छानबीन के साथ पुराणों से प्रमाण इकट्ठा कर कर अपने मत की पुष्टि की है। लम्बी २ कथाओं का सार हिन्दी भाषा लिख कर मूल प्रमाण भी यत्रतत्र उद्धृत किये हैं। पुस्तक का क्रम और लिखने का ढंग अच्छा है। पुस्तक पढ़ने में जी लगता है।

श्री पं० बाबूराम जी एडीटर [illegible]

श्री० मुन्शी [illegible] जी वैश्य एक पुराने आर्यसमाजी पुरुष हैं। आपने नारायणी शिक्षा आदि लाभकारी पुस्तकें लिखकर आर्य [illegible] बड़ी सहायता की है और साहित्य पर बड़ा उपकार किया है। हाल में ही आपने पु० त० प्र० नामक एक नूतन पुस्तक तैयार की है। हमने इसको आदि से अन्त तक पढ़ा है, इस लिये हम दावे के साथ कह सकते हैं कि [illegible] अठारह पुराणों का तत्त्व प्रकाश करने में अनुपम और अद्भुत प्रकाशित हुई है।

श्री० महता जैमिनि जी।

मैंने [illegible] पुराणतत्त्वप्रकाश नामक पुस्तक से यहां विदेश में बड़ी सफलता प्राप्त की वास्तव में आपने १८ पुराणों की [illegible] बड़ी छानबीन से की है।

[illegible]

तुलसी कृत रामायण से संकलित

बालकों के लिये

अत्युपयोगी

रत्न-भण्डार

अर्थात्

ज्ञान रामायण

गद्य एवं पद्य में बच्चों को शिक्षा देने के लिये एवं पाठशालाओं में धर्म शिक्षा के स्थान में पढ़ाने योग्य एक ही पुस्तक है। यू० पी० की टेक्सबुक कमेटी ने भी इस को लायब्रेरी में रखने एवं बच्चों के लिये पसन्द किया है। मूल्य ।=) आना।

उपन्यास स्वरूप में स्त्री-शिक्षा की अनूठी पुस्तक

नारी भूषण अर्थात् [illegible]

जिसकी प्रशंसा में अनेकानेक पत्र सुयोग्य स्त्री पुरुषों के आ चुके हैं।

(जो दूसरी बार छप कर आई है)

प्रिय पाठक पाठिकाओं! यह किताब क्या है मानो शिक्षा की कुञ्जी, प्रेम की पुड़िया अपने ढंग की निराली और अजीब है, भाषा इसकी सरल रोचक है उपन्यास ही ढंग पर लिखी गई है। अपनी सुन्दरता में तो अनूठी ही

है ! यदि आप अपनी सन्तानों को धनवान, बुद्धिमान, धर्मात्मा, सुशील, सदाचारी, आज्ञाकारी आदि गुणों से विभूषित करना चाहते हैं तो एक बार "प्रेमधारा" का अवश्य पाठ कराइये। देखिये प्रियंवदा देवी ने किस सरल रीति से कटुभाषिणी यशोदा और उसके पुत्र वधुओं को समझाया है. कैसी २ उत्तम कहानियाँ सुनाई हैं। जिनके सुनते ही सास बहुओं का वैमनस्य दूर हो प्रेम का अंकुर उनके हृदयों में जम गया जिसके कारण सम्पूर्ण गृह स्वर्ग के सदृश्य प्रतीत होने लगा। तदुपरांत सुयोग्य प्रियंवदा [illegible] की आवश्यकीय बातों को बताकर देश देशान्तरों के वृत्तान्त सुना एक विवाह पर नगर की मुख्य स्त्रियों के आक्षेपों का उत्तम रीति से समाधान कर कुरीतियों का संशोधन किया है। प्रिय सज्जन पुरुषो! यह पुस्तक क्या है मानो पुत्र पुत्रियों का पथदर्शक है। यदि आप अपनी स्त्रियों के [illegible] में ऐक्यता आदि सद्गुणों का बीज बोना चाहते हैं। तो अवश्य एक बार वी॰ पी॰ से मंगा स्वयं पढ़ एक एक प्रति प्रत्येक गृहों में पहुंचा दीजिये। २०० पृष्ठ होने पर भी आप सब के सुभीते के लिये मूल्य ।।।) मात्र है।

आदर्श जीवनों के पाठ ही आदर्श जीवन बनाते हैं।

नीचे लिखे जीवनों में श्रेष्ठ जीवन बनाने के लिये पर्याप्त सामिग्री उपस्थित है

देखिये—

१-श्री १०८ [illegible] का पूर्ण जीवन मूल्य १।।)

तीन चित्रों सहित

युधिष्ठिर ।) आने. अर्जुन =) आने, भीमसेन =) आने,

विदुर =) आने. धृतराष्ट्र =) आने. द्रोणाचार्य =) आने.

दुर्योधन =)।। आने

———

दशरथ -)।। आना, राम ≈) आने, लक्ष्मण -) आना,

भरत -), महारानी मंदालसा ।)।।

भजनों का नया

शिक्षाप्रद भजनों का—

संग्रह

प्रथम भाग

इस पुस्तक में उत्तमोत्तम उपदेश प्रद भजनों का संग्रह है मूल्य केवल)॥ पैसा

स्त्री ज्ञान गजरा

द्वितीय भाग

इस में प्रार्थना, वीर स्त्रियों की वीरता, पतिव्रता आदि धर्म विषयों पर भजन, लावनी, दादरा और रसीली शिक्षाप्रद गज़लें और बारहमासा हैं। मूल्य केवल ―)॥ आना।

कन्या गीत माला

कन्याओं को कण्ठस्थ कराने योग्य उपदेशमय भजनों का नवीन तर्ज से संग्रह किया गया है। मूल्य केवल ॥। पैसा।

पुत्री—प्रियम्बदा

रचित

१—कलियुगी परिवार का एक दृश्य मू० ॥)

२—धर्मात्मा चाची अभागा भतीजा मू० ।=)

३—आनन्दमयी रात्रि का स्वप्न मू० =)

४—हमारी दशा .... मू० =)

वीर्य रक्षा

यथार्थ शांति [illegible] ≡) आने   शांति शतक =) आने

द्वैतप्रकाश –)   प्रेम पुष्पावली –)॥   चित्र शाला –)

शम्पाक, हारीत, पिङ्गल, बोध्य, मंकि, हंस, उतथ्य और वामदेव

यह आठ गीता भाषानुवाद सहित मूल्य केवल ॥)

भारत माता का क्रन्दन

ध्यान पूर्वक पढ़ने से आप भारत माता के दुःखों को जान, उसके दूर करने का यत्न करेंगे। मूल्य ≡) आने

दयानन्द दर्शन मूल्य –)

जीवन सुधा

इस छोटी सी पुस्तक को श्री स्वामी '[illegible]' ने 'श्री पूज्यपाद स्वामी [illegible] महाराज' के व्याख्यानों के आधार पर लिखा है पढ़ने और विचारने योग्य है, नित्य पाठ करने से अत्यन्त लाभ की आशा है।

मूल्य –)॥

छुआ छूत और जाति पांति

इस पुस्तक का श्रीमान् [illegible] जी ने छुआछूत और जाति पांति के विषय में भारत प्रसिद्ध नेताओं की क्या २ सम्मतियां हैं–आप देख अन्य स्त्री पुरुषों को दिखलाइये और बतलाइये। मूल्य –)॥ है।

प्रत्येक गृहस्थ को स्वाध्याय करने योग्य

वैद्यक की उपयोगी पुस्तकें
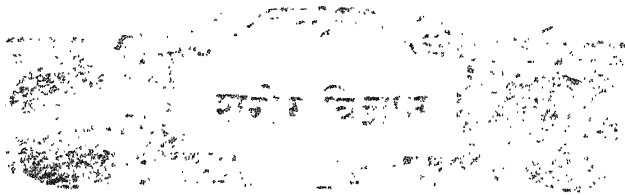
इस पुस्तक में शरीर किन पदार्थों से बना है पंच महाभूत किसको कहते हैं। वायु और उसके भेद श्वास पसीना, तेज जल और शरीर की गतियां तथा मस्तक, आंख, नाक, कान, मुंह, दांत, मसूड़े, तालु, गाल, कनपटी, ठोढ़ी, गर्दन, धड़, हंसली, शिरा, धमनी, स्नायु, पेशी, कण्डरा, फुफ्फुस, हृदय, फेफड़ा, [illegible], मिचनी, पक्वाशय, तिल्ली और जिगर क्या है? भोजन कैसे और कहां पचता है? इस प्रकार की लगभग १०० बातों का वर्णन सरल भाषा में किया गया है साथ ही उन नियमों को भी बतलाया गया है जिन पर चलने से शरीर आरोग्य रह सकता है बिना शरीर की बनावट के ज्ञान के उसको निरोग रखना कठिन है पूर्ण सुख धन और ऐश्वर्य शरीर को स्वस्थ रखने से ही मिलते हैं इस लिये यदि आप कुटुम्ब सहित सुखी रहना चाहते हो तो सचित्र एवं अनुपम इस पुस्तक का पाठ कर उसके ज्ञान से बालकों और स्त्रियों को भी अलंकृत कीजिये। मूल्य केवल ॥)

युवती रोग चिकित्सा

लगभग दस वर्ष से मैंने औषधालय खोला है पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को बहुत रोगों से दुःखित पाया, सैंकड़ों भारत माता की पुत्रियां सन्तान न होने के कारण विकल हो असमय संसार से विदा हो रही हैं अतः उनके दुःख दूर करने और उनकी गोद को सन्तान रूपी रत्न से अलंकृत करने के लिये हमने कई वर्ष के नितान्त परिश्रम एवं अनुभव से इस पुस्तक को तैयार कर मोटे सफेद कागज़ पर उत्तम अक्षरों में छपवाया है इसमें रज क्या है? शुद्ध रज की पहिचान बांझ स्त्री पुरुषों की परीक्षा आठ प्रकार की बन्ध्या[illegible] का वर्णन, बन्ध्या रोग निवारण मासिकधर्म ठीक होने के नुसखे योनि के समस्त रोगों का इलाज प्रदर और प्रदर रोगों की चिकित्सा मृतवत्सा (सन्तान होकर नष्ट हो जाना) की चिकित्सा गर्भ धारण की औषधियां गर्भिणी के रोगों की चिकित्सा-प्रसव के बाद रोगों का इलाज पेट के नलों और दूध की चिकित्सा तथा स्त्रियों के प्रबल रोग हिष्ट्रिया आदि १०५ रोगों की चिकित्सा का वर्णन सरल सरल अनुभूत नुसखों द्वारा किया गया है आशा है माताएं और बहिनें इस पुस्तक को पढ़कर दुःखों से छुटकारा पा हमारे परिश्रम को सफल करेंगी। मूल्य केवल लागत मात्र ।=)

गर्भाधान-विधि

इस पुस्तक को साहित्य प्रेमियों ने इतना पसन्द किया है कि यह सोलहवीं बार छपी है इस अमूल्य पुस्तक में वैद्यक शास्त्रों एवं प्राचीन काक ग्रन्थों से स्त्री पुरुष लक्षण-परीक्षा धातु और उसके गुण-प्रसंग को रीति-सामावद्ध संतानोत्पत्ति की विधि गर्भ में सन्तान परीक्षा-गर्भवती का कर्तव्य-प्रसूति रक्षा-शिशु पालन और सन्तानों के दीर्घ जीवी होने के अनेक उपाय भले प्रकार लिखे गये हैं अर्थात् जो २ बातें इस में लिखी गई हैं वह २-४ रुपये खर्च करने पर भी आपको प्राप्त नहीं और केवल चार आना खर्च करने पर इस पुस्तक में आप को हो सकता उपरोक सभी बातें मिलेगी। जिनके पाठ से और उनके अनुकूल कार्य्य से योग्य बलवान सन्तानें उत्पन्न कर भारत का मुख उज्ज्वल कर यश प्राप्त कर सकते निःसन्तान स्त्री पुरुष इसके अनुसार कार्य कर ईश्वर की दया से सन्तान का मुख देख अपने जीवन को आनन्द मय बनाकर सुख भोगेंगे।